भारतीय ग्रन्थमाला-संख्या ९

भारतीय राजस्व

(जिसमें ब्रिटिश भारत के सरकारी आय व्यय का विवेचन है)

लेखक और प्रकाशक

'भारतीय शासन' 'भारतीय विद्यार्थीविनोद, भारतीय जागृति'
'भारतीय राष्ट्र निर्माण' और 'भारतीय अर्थ शास्त्र'
आदि आदि पुस्तकों

के

रचयिता, तथा

प्रेम महा विद्यालय में, अर्थ शास्त्र और नागरिक धर्म के
शिक्षक

भगवान दास केला

भारतीय ग्रन्थमाला, वृन्दावन

पं० विश्वम्भरनाथ वाजपेयी के प्रबन्ध से ओंकार प्रेस, प्रयाग, में मुद्रित

प्रथम संस्करण } सन् १९२३ ई० { मूल्य ॥।≈)

पुस्तक मिलने के पते :—

१—भगवान दास केला, भारतीय ग्रन्थमाला, वृन्दाब

२—ओंकार बुकडिपो, इलाहाबाद

३—जनरल ब्यूरो कम्पनी, २२५-बहादुर गंज, इलाहा

४—हरिश्चन्द्र ऐण्ड ब्रादर्स, मदार दरवाज़ा, अलीगढ़

५—"माहेश्वरी" पत्र कर्यालय, देहली।

समर्पण

श्री० प्रोफेसर दयाशङ्कर जी दुबे

एम० ए०, एल० एल० बी०

अर्थ शास्त्र शिक्षक, कामर्स विभाग,

लखनऊ विश्वविद्यालय,

और मंत्री,

भारतवर्षीय हिन्दी अर्थ शास्त्र परिषद्, लखनऊ,

की सेवा में

यह पुस्तक आदर, प्रेम और श्रद्धा पूर्वक

समर्पित की जाती है

—लेखक

हम इस विषय की पृथक् पुस्तक की रचना कर सके और इसे प्रकाशित भी करा सके। अब इस का प्रचार, आर्थिक साहित्य और आर्थिक स्वराज्य के प्रेमियों के उद्योग पर निर्भर है। क्या इस में कमी रहेगी ? क्या देश के आर्थिक उद्धार का प्रयत्न न किया जायगा ?

इस पुस्तक के विषय में हमें समय समय पर कई मित्रों ने बहुत उपयोगी परामर्श दिया हैं। सब से अधिक सहायता श्री० प्रोफेसर दया शंकर जी दुबे, एम० ए०, एल० एल० बी० लखनऊ, की रही है। श्री० संगम लाल जी अग्रवाल, एम० ए०, एल० एल० बी०, वाइस चान्सलर महिला विद्यापीठ प्रयाग, ने इस पुस्तक की भूमिका लिखने की कृपा की है। श्री० पं० बलदेव प्रसाद जी शुक्ल, प्रयाग ने प्रेस सम्बन्धी कार्य में योग दिया है। इन सब महाशयों के हम अत्यन्त कृतज्ञ हैं।

विनीत

भगवानदास केला

भूमिका

हिन्दी में अर्थ शास्त्र सम्बन्धी पुस्तकें वहुत कम हैं; जो हैं भी उन में से दो एक को छोड़ कर शेष उच्च कोटि की नहीं हैं। भारतीय स्थिति पर आर्थिक दृष्टि से विवेचन करने वाली पुस्तकें तो अंगरेज़ी में भी विशेष नहीं। हर्ष की बात है कि श्री० भगवानदास जी केला ने "भारतीय अर्थ शास्त्र" नामक, हिन्दी की एक खासी बड़ी पुस्तक लिखी है। उस में राजस्व का भी कुछ वर्णन किया गया है। परन्तु ऐसे महत्वपूर्ण विषय का स्वतंत्र विवेचन होने की बडी आवश्यकता थी। इस लिये आपने इस 'भारतीय राजस्व' पुस्तक की रचना की है। इसे देख कर मुझे बहुत आनन्द हुआ है।

इस पुस्तक में पहिले राजस्व सम्बन्धी सिद्धान्तों का सरल और संक्षिप्त विवेचन करके भारत सरकार के, प्रान्तीय सरकारों के तथा स्थानीय स्वराज्य संस्थाओं के आय व्यय पर भली भांति प्रकाश डाला है और अन्त में आर्थिक स्वराज का आदर्श सामने रखा है। इस पुस्तक को देखने से मालूम हो जाता है कि प्रति वर्ष हमारे देश का सैकड़ों करोड़ रुपया किस प्रकार खर्च होता है, तथा उसमें क्या सुधार होने की आवश्यकता है। निस्सन्देह ऐसी पुस्तकों का अवलोकन और मनन करना प्रत्येक भारत हितैषी का कर्तव्य है। अर्थ शास्त्र के ज्ञान का भली भांति प्रचार होने पर ही भारतवर्ष की आर्थिक स्थिति सुधर सकती है।

श्री० केलाजी ने 'भारतीय शासन' "भारतीय जागृति" 'भारतीय राष्ट्र निर्माण' आदि कई उपयोगी पुस्तकें लिखी हैं। यदि हिन्दी संसार ने आप का उत्साह बढ़ाया तो मुझे आशा है कि आप अर्थ शास्त्र सम्बन्धी विविध विषयों पर पृथक् पृथक् रचनायें प्रकाशित कर हिन्दी साहित्य के इस अंग की पूर्ति करेंगे।

संगमलाल अग्रवाल

एम० ए०, एल० एल० बी०

सहायक पुस्तकें

श्री० प्राणनाथ विद्यालंकार	राष्ट्रीय आय व्यय शास्त्र
पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी	सम्पत्ति शास्त्र
प्लेह्न	पब्लिक फाइनान्स
वी० जी० काले	इन्डियन ऐडमिनिस्ट्रेशन
	इन्डियन इकानोमिक्स
वेस्टेबल	पब्लिक फाइनान्स
लियोनार्ड एल्स्टन	एलिमेंटस आफ इन्डियन टेक्सेशन

सरकारी रिपोर्ट, बजट, और 'स्वार्थ' 'मर्यादा' आदि मासिक पत्र, तथा अन्य सामयिक पत्र पत्रिकायें।

भ्रम-निवारक पत्र

इस पुस्तक में अङ्कों का काम बहुत है। प्रूफ यथा शक्य सावधानी से देखा गया है। फिर भी यदि कोई त्रुटि रह गयी हो तो विद्वान पाठक उसे सुधार कर पढ़ सकते हैं। हम यहां कुछ खास खास बातों का उल्लेख करते हैं—

पृष्ठ ३२ के नीचे से तीसरी पंक्ति में, उपशीर्षक का नम्बर '४' की जगह '५' होना चाहिये।

पृष्ट ३४ की चौथी पंक्ति में 'स्टाम्प' उपशीर्षक से पहिले उसका नम्बर '६' समझना चाहिये।

पृष्ठ ४१ की सातवीं पंक्ति में 'आयत' की जगह 'आय' होना चाहिये।

पृष्ट ४६ की तेरहवीं पंक्ति में "को आय में १८–५" की जगह, "की आय में १८.५" होना चाहिये।

पृष्ट ७८ में दसवीं और ग्यारहवीं पंक्तियों के वाक्य दुबारा आगये हैं। इनकी आवश्यकता नहीं।

पृष्ट ८१ की पहिली पंक्ति में उपशीर्षक से पहिले उसका नम्बर '६' होना चाहिये।

पृष्ट ६५ मे नक्शों के खाने में जहाँ '११२१-२२' छपा है, जहां "१६२१-२२" समझना चाहिये।

पृष्ट १०२ की पहिली पंक्ति में उपशीर्षक से पहिले उसका नम्बर '१' और पृष्ट १०६ की पहिली पंक्ति में उपशीर्षक से पहिले उसका नम्बर '२' होना चाहिये।

पृष्ट १०६ की अंतिम पंक्ति की रकम में '५' के अंक की जगह '६' होना चाहिये।

पृष्ठ १२० की अंतिम पंक्ति में न्याय आदि की रकम, मद्रास की ३२८ है।

पृष्ट १२१ की दूसरी पंक्ति में चिकित्सा और स्वास्थ का योग '४१२' की जगह '४११' होना चाहिये।

पृष्ट १२७ की अंतिम पंक्ति में योग १३७-५६ की जगह १३६-५६ होना चाहिये।

पृष्ट १४३ में पहिली दो रकमों के अंकों में दशमलव का विन्दु नहीं छपा, वे क्रमशः १६-६७ और ४-५८ समझनी चाहिये।

पृष्ट १४४ की बारहवीं पंक्ति में अन्तिम शब्द 'करोड़' की जगह 'लाख' एवं अठारहवीं पंक्ति में योग ५६५ की जगह १६२ होना चाहिये।

१५६ पृष्ट की पहिली पंक्ति में 'साधारण मालगुजारी, के आगे 'में' अक्षर छपने से रह गया।

१७५ पृष्ट में नकशे में आय पर फीसदी कर ६३ की जगह ६-३ समझना चाहिये।

पृष्ट १७६ में स्वास्थ रक्षा और शिक्षा उपशीर्षकों से पहिले उनका नम्बर क्रमशः '२' और '३' होना चाहिये।

पृष्ट १६० की अंतिम पंक्ति में 'खाद' की जगह 'स्थान' होना चाहिये।

पृष्ट १६१ की बारहवीं और सतरहवीं पंक्ति में 'निमन्त्रण'

की जगह ''नियन्त्रण' और चौदहवीं पंक्ति में 'पाप' की जगह 'माप' होना चाहिये ।

पृष्ट १९६ की सोलवीं पक्ति में 'और सरकारी' की जगह 'गैर सरकारी' होना चाहिये ।

पृष्ठ २०३ में नकशे के बाद 'बोर्ड' उपशीर्षक है ।

पृष्ट २०६की ८वीं पंक्ति में १७२२ की जगह १७-२२ समझना चाहिये ।

पृष्ठ २०६ की सतरहवीं पंक्ति में 'राह' की जगह 'राय' और बीसवीं पंक्ति में 'सभा' की जगह 'परिषद्' चाहिये ।

और, जहां कहीं दशमलव का बिन्दु स्पष्ट न हो, वह सम्बन्ध जाना जा सकता है ।

पुस्तक का अन्तिम परिच्छेद का विषय 'आर्थिक स्वराज्य' है अतः २०६, २११ और २१३ पृष्टों के ऊपर 'स्थानीय राजस्व' की जगह 'आर्थिक स्वराज्य' समझना चाहिये ।

विषयानुक्रमणिका

पहिला परिच्छेद; विषय प्रवेश ।

दूसरा परिच्छेद; कर सम्बन्धी नियम ।

तीसरा परिच्छेद; करों का विवेचन ।

चौथा परिच्छेद; भारतीय राजस्व व्यवस्था ।

पांचवां परिच्छेद; केन्द्रीय व्यय।

छठा परिच्छेद; केन्द्रीय आय।

सातवां परिच्छेद; प्रान्तीय व्यय।

आठवां परिच्छेद; प्रान्तीय आय।

नवां परिच्छेद; सार्बजनिक ऋण।

ग्यारहवां परिच्छेद; आर्थिक स्वराज्य ।

दसवां परिच्छेद, स्थानीय राजस्व ।

भारतीय राजस्व

विषय प्रवेश

राजस्व—राजस्व का अर्थ राज-धन या राज्य की आय व्यय है।* भारतीय राजस्व में हमें भारतवर्ष में करों द्वारा या अन्य प्रकार से प्राप्त होने वाली सरकारी आय, उसके व्यय, सार्वजनिक ऋण आदि विषयों का विवेचन करना है। यहां राज्य की क्या क्या आवश्यकतायें हैं, और वह किस किस प्रकार से धन प्राप्त करके उनकी पूर्ति करता है, यह विचार करना है। अतः हमें प्रथम यह देखना चाहिये कि राज्य का देश की आर्थिक स्थिति और उन्नति में क्या स्थान है।

---

* कुछ महाशय राजस्व से विशेषतया आय का ही अभिप्रायः लेते है। परन्तु हम, इसके विवेचन में आय और व्यय दोनों का ही विचार आवश्यक समझने वाले ग्रन्थकारों से सहमत हैं। लेखक।

आर्थिक उन्नति और राज्य प्रबन्ध—यदि देश में उचित राज्य प्रबन्ध न हो, हर समय चोर, डाकुओं, छली, कपटियों तथा बलवानों के अत्याचारों का भय हो, तो धन की रक्षा का विश्वास न होने से धन बहुत कम उत्पन्न किया जा सकेगा, और जो कुछ उत्पन्न भी होगा, उसे शीघ्र ख़र्च कर डालने तथा छिपा कर रखने की प्रवृत्ति होगी। बचत को धन की उत्पत्ति के काम में नहीं लगाया जायगा। इस प्रकार मूलधन अर्थात् पूंजी का हर दम दिवाला निकला रहेगा। इस लिए आर्थिक दृष्टि से देश में राज्य प्रबन्ध की बड़ी आवश्यकता है।

राज्य के मुख्य कार्य; देश रक्षा—राज्य का मुख्य कार्य देश के बाहरी शत्रुओं को हटाना और देश में शांति और सुप्रबन्ध रखते हुये जनता की सुख-समृद्धि में सहायक होना है। इसके लिये राज्य को फ़ौज, पुलिस तथा अन्य कर्मचारी रखने होते हैं। कभी कभी ऐसा भी होता है कि राज्य केवल देश की रक्षा के लिये ही फ़ौज नहीं रखता, वरन् संसार के अन्य देशों में अपनी मान मर्यादा की वृद्धि के लिये भी रखता है। खेद है कि यह प्रवृत्ति बढ़ती ही जाती है।

प्राचीन काल में कुछ 'धर्म-प्रेमी' देशों ने तलवार के बल से "धर्म" का प्रचार किया था। अब प्रबल राष्ट्र इस बात का उद्योग कर रहे हैं कि उन्नति-काल के भयंकर

शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित हो दूसरे देशों में अपनी 'सभ्यता' का प्रचार करें अथवा उन्हें अपने व्यापार के लिये प्रभाव-क्षेत्र बनावें। निदान बहुत कम देशों का और बहुत थोड़ा धन आत्मरक्षा में व्यय होता है। अधिकांश देशों का, और अधिकांश धन दूसरों को परतंत्रता के पाश में जकड़ने के लिये खर्च किया जा रहा है। विशेष दुःख की बात तो यह है कि वर्तमान नीति का यह एक सिद्धान्त सा ही हो चला है कि शान्ति चाहते हो तो युद्ध के लिये तैयार रहो। इस प्रकार शान्ति की आड़ में युद्ध की तैयारी करना एक साधारण बात है। प्रत्येक देश अपने पड़ोसी से भयभीत होकर उससे अधिक सुदृढ़ सेना रखना चाहता है तो हर एक का सैनिक व्यय बराबर बढ़ने वाला ही ठहरा! अब यह निश्चय करना ही कठिन हो जाता है कि आत्मरक्षा के लिये कितना व्यय करना उचित है, और किस मात्रा से अधिक होने पर उसे अनुचित कहना चाहिये। अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक परिषद् ने किसी देश की कुल आय का अधिक से अधिक बीस फी सदी सेना में व्यय करना उचित ठहराया है, परन्तु इसपर शान्ति से विचार ही कौन करता है? भारत की विदेशी सरकार तो इस देश के दरिद्र होते हुए भी यहां की केन्द्रीय और प्रान्तीय आय के योग का लगभग तैंतीस फीसदी भाग सेना में खर्च कर डालती है। पुलिस का खर्च अलग रहा।

राज्य के गौण कार्य—राज्य के अन्य कार्य गौण अथवा ऐच्छिक होते हैं। ये कार्य भिन्न भिन्न देशों की परिस्थिति या आवश्यकता के अनुसार पृथक् पृथक् होते हैं। तथापि इसमें संदेह नहीं कि आधुनिक सभ्यता में राज्य के कार्य अधिकाधिक बढ़ते ही जा रहे है। रेल, तार, डाक, आदि पारस्परिक व्यवहार के नये साधन अब बहुत से देशों में राज्य के अधीन हैं, भारतवर्ष में तो इन कामों के अतिरिक्त जङ्गल और नहर का प्रबन्ध भी राज्य ही करता है, वही अफ़ीम आदि मादक पदार्थों की उत्पत्ति का नियंत्रण करता है और इनकी बिक्री के लिये ठेका देता है; एक बड़े ज़मींदार की तरह यहां मालगुज़ारी वसूल करता है और नमक जैसे जीवनोपयोगी पदार्थों पर एकाधिकार रखता है, और वही शिक्षा, स्वास्थ और न्याय आदि विभागों का प्रबन्ध करता है। इससे अनुमान किया जा सकता है कि राज्य की शक्ति हमारे आन्तरिक जीवन पर कितना प्रभुत्व रखती है और हम राज्य के कितने अधीन हैं। यदि किसी देश में राज्य पूर्णतः प्रजा-तंत्र और प्रजा हितैषी हो तो कदाचित् उसकी ऐसी प्रभुता विशेष आपत्ति-जनक न हो! परन्तु भारतवर्ष जैसे देशों में जहां यह बात नहीं है, सार्वजनिक कार्यों में राज्य का हस्तक्षेप न्यूनतम होना चाहिये।

कर का लक्षण—इसमें संदेह नहीं है कि मानव समाज में राजा की उत्पत्ति चिर काल से हो चुकी है। भारतवर्ष में तो सतयुग के समय में भी राजाओं के होने का प्रमाण है। अस्तु,

जब से राजा होने लगा, तभी से उसे अपने मुख्य अथवा गौण, सभी कार्यों को करने के लिये धन की आवश्यकता होने लगी। इसी लिये राजा को प्रजा से धन मिलने लगा। राजा को मिलने वाले इस धन का स्वरूप देश काल के अनुसार बदलता रहा है! पहले एक समय ऐसा भी रह चुका है कि प्रजा राजा को उसके विविध कार्यों के लिये स्वयं ही धन दिया करती थी। अब राजा कर या टैक्स लगा कर आवश्यक धन वसूल करता है। भिन्न भिन्न परिस्थितियों के अनुसार कर की परिभाषा भी पृथक् पृथक् होगी। आधुनिक काल में प्रायः श्री० प्रोफेसर वेस्टेबल द्वारा की हुई कर की परिभाषा सर्वोत्तम मानी जाती है। उनका कथन है कि—

"कर, सार्वजनिक शक्तियों के कार्यों के लिये, व्यक्तियों या व्यक्ति-समूहों से, अनिवार्य रूप में लिया हुआ धन है।"

इस परिभाषा में निम्न लिखित बातें विचारणीय हैं—

१—सार्वजनिक शक्तियों में केन्द्रीय, प्रान्तीय एवं स्थानीय सब शक्तियां सम्मिलित है। अतः देहातों या क़स्बों से स्थानीय कार्यों के लिये लिया हुआ धन भी कर है।

२—जो धन लिया जाता है, वह सार्वजनिक कार्यों में खर्च किये जाने के लिये है, किसी व्यक्ति विशेष, या जाति विशेष अथवा समाज विशेष के स्वार्थ साधन के लिये नहीं। राज्य को इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि वह इस विषय में पक्ष-

पात से काम न ले और देश की जनता के लिये बहुत सा धन न उड़ा दे। बहुधा स्वाधीन देशों में भी राज्य अपनी धनी, या धर्माधिकारी (पुरोहित आदि) प्रजा के प्रभाव में रहता है। फिर भारत जैसे पराधीन देशों का तो कहना ही क्या, उनमें तो राज्य का पदे पदे शासक जाति से प्रभावित होना सम्भव है।

निस्संदेह देश में ऐसे काम बहुत कम होते हैं, जिनसे उनके प्रत्येक व्यक्ति को लाभ हो; परन्तु यदि किसी कार्य से अधिकांश जनता का हित हो और उससे लाभ उठाने में शेष जनता के लिये कोई बाधा न हो तो उस काम को सार्वजनिक कह सकते हैं। यदि इसके विपरीत, किसी कार्य से बहुत थोड़े से ही आदमियों का हित होता हो, शेष उसका उपयोग न कर सकें, और उन के लिये राज्य ने वैसा कोई दूसरा कार्य भी नहीं करा रक्खा हो, तो इस कार्य को सार्वजनिक कहना जनता को धोखा देना है। हां, निर्धन रोगी और अंग हीन प्रजा की रक्षा का कार्य सार्वजनिक माना जाता है।

कोई कार्य सार्वजनिक है या नहीं, इस बात की जांच करने का यह एक स्थूल नियम दिया गया है, परन्तु कभी कभी बड़ी जटिल समस्या उपस्थित हो जाती है। सुयोग्य न्यायाधीश ही अच्छी तरह निर्णय कर सकते हैं कि कौन सा कार्य सार्वजनिक है और कौन सा नहीं, इस लिये यह निर्णय करने का काम उन्हीं पर रहना चाहिये। भारतवर्ष में 'राजा करे सो न्याय' माना जाता है। वह चाहे जिस काम को सार्वजनिक ठहरा दे उसके

विरुद्ध कुछ कहने का अधिकार नहीं है। और तो और, ईसाई धर्म सम्बन्धी (Ecclesiastical) खर्च भी प्रति वर्ष सार्वजनिक माना जाता है और व्यवस्थापक सभा उस पर अपना मत नहीं दे सकती !!!

स्मरण रहे कि सार्वजनिक कार्यों का निमित्त लेकर प्रजा से आवश्यकता से अधिक धन वसूल करना और बड़ी बड़ी रक़में बचा लेना भी उचित नहीं है । भारत सरकार ने ऐसा कई बार किया है।

३—कर, अन्ततः व्यक्तियों या व्यक्ति-समूहों से ही लिये जाते हैं। भोजन वस्त्र आदि के कर, कहने को तो पदार्थों पर लगाये जाते हैं, परन्तु इनके चुकाने वाले होते हैं, व्यक्ति या व्यक्ति-समूह ही।

जब कि राज्य सार्वजनिक कार्यों के लिये धन संग्रह करता है तो व्यक्तियों एवं व्यक्ति-समूहों का यह कर्तव्य ही है कि उसमें योग दें। साथ ही राज्य को चाहिये कि वह भी कर वसूल करने में सब को समानता की दृष्टि से देखे और निष्पक्ष व्यवहार करे।

४—'अनिवार्य रूप में' कहने से अभिप्रायः यह है कि कर देने में व्यक्ति या व्यक्ति-समूह स्वतंत्र नहीं है। वे किसी निश्चित् कर को देना चाहें या न चाहें, उन्हें वह देना ही पड़ेगा । यदि राज्य प्रजा के यथेष्ट प्रतिनिधियों द्वारा पूर्ण रूप से नियंत्रित

है तो इसमें विशेष अनौचित्य नहीं। परन्तु जब कोई कर इस तरह का है जिसे देश के बहुत से आदमी पसन्द नहीं करते, या जब कर से वसूल किया हुआ रुपया इस प्रकार व्यय होता है कि प्रजा वर्ग के बहुत से आदमी उसके विरोधी हों, तो यह स्पष्ट है कि प्रतिनिधियों ने यथेष्ट कर्तव्य पालन नहीं किया अथवा राज्य प्रबन्ध बहुत सुचारु रूप से नहीं हो रहा है।

विदित हो कि आधुनिक कालमें कर अनिवार्य करने में मूल उद्देश्य यह है कि कर का भार सब पर समान रूप से पड़े। यदि किसी आदमी को इससे मुक्त कर दिया जावे तो उसके हिस्से का कर-भार दूसरों पर पड़ेगा; इस लिये प्रत्येक समर्थ व्यक्ति से कर अनिवार्य रूप में ही लेना न्यायानुमोदित है।

५—'धन' से यहां अभिप्राय केवल प्राकृतिक या भौतिक पदार्थों से ही नहीं। अनिवार्य रूप से सैनिक सेवा या बेगार लेना अथवा अन्य कार्य करना भी पहले चिर काल तक कर का ही एक स्वरूप माना गया है। अब भी युद्ध काल में सैनिक सेवा लिया जाना न्याय विरुद्ध नहीं समझा जाता। हम यह मानते हैं कि आपत्ति काल में मर्यादा नहीं रहती, तथापि भारतवर्ष में साधारण परिस्थिति में भी अनेक स्थानों में जो बेगार ली जाती है, वह सर्वथा अनुचित और न्याय विरुद्ध है।

६—कर प्रजा से वसूल किये जाते हैं और प्रजा के लिये वसूल किये जाते हैं। अतः प्रजा को वह जानने का अधिकार है कि करों के रूप में जो धन राजा संग्रह करता है, वह किन

किन कार्यों में व्यय होता है। आज कल प्रायः सभी सभ्य देशों में सरकारी आय व्यय का हिसाब सर्वसाधारण के अवलोकनार्थ प्रकाशित करने की रीति है। परन्तु जिन देशों में शिक्षा का यथेष्ट प्रचार न हो, वहां उक्त हिसाब प्रकाशित करने से भी यथोचित उद्येश्य पूर्ति-नहीं होती। भारतवर्ष में सरकारी हिसाब विदेशी भाषा-अंगरेज़ी में छपने से, साधारण जनता को उसका ज्ञान सुलभ नहीं है। यहां शिक्षितों की संख्या बहुत ही कम, केवल सात फी सदी है, अंगरेज़ी जानने वालों का अनुपात तो और भी क्षुद्र है। वास्तव में, सरकारी हिसाब जनता की जानकारी के लिये छपाना अभीष्ट है तो समस्त देश का हिसाब भारतवर्ष की राष्ट्र-भाषा हिन्दी में, और प्रान्तों का हिसाब प्रान्तीय भाषाओं में प्रकाशित होना चाहिये।

राजस्व सम्बन्धी प्रारम्भिक बातों का वर्णन कर चुकने पर अब अगले परिच्छेद में इस विषय पर विचार किया जायगा कि कर निर्धारित करने के नियम क्या हैं और उनका किस प्रकार अथवा कहां तक पालन होता है।

दूसरा परिच्छेद

कर सम्बन्धी नियम

प्राक्कथन—हम पहिले कह आये हैं कि चिर काल से राजा लोग अपनी प्रजा से कर लेते रहे हैं। देश की भिन्न भिन्न परि-स्थिति के अनुसार कर सम्बन्धी नीति बदलती रही है। आधु-निक अर्थशास्त्र-वेत्ताओं ने इस विषय का विशेष विचार अठा-रहवीं शताब्दि के अन्त में किया है।

आडम स्मिथ के नियम—कर लगाने के सम्बन्ध में अर्थशास्त्र के प्रवर्त्तक मि० आडम स्मिथ के चार नियम प्रसिद्ध हैं। यद्यपि इनकी व्याख्या में बहुत विद्वानों का भिन्न भिन्न तर्क होता है और इन्हें पूर्णतः पालन करना कठिन है, तथापि इनके समुचित विवेचन से राजा और प्रजा दोनों का लाभ है, कर दाताओं पर न्यूनतम भार पड़ता है और राज्य को अधिकतम आय प्राप्त हो जाती है। इन के समानता सम्बन्धी प्रथम नियम में कई सिद्धान्तों का समावेश है।

पहिला नियम, समानता—"प्रत्येक राज्य के आदमियों को राज्य की सहायता के लिये यथा सम्भव अपनी अपनी सामर्थ के अनुपात में कर देना चाहिये, अर्थात् उस आयके अनुपात में कर देना चाहिये जो राज्य-संरक्षण में, उनमें से प्रत्येक को प्राप्त है"

समानता और स्वार्थ त्याग का सिद्धान्त—उपर्युक्त नियम का आशय यह है कि कर इस प्रकार निर्धारित किये जांय कि प्रत्येक कर दाता को समान स्वार्थ त्याग करना पड़े। भिन्न भिन्न आदमियों को कर देने में जो कष्ट अनुभव होता है, उसकी ठीक ठीक माप बहुत कठिन है, इस लिये कर को इस प्रकार ठहराना कि सब को समान कष्ट हो, बहुत कठिन है। संसार में अपवाद तो प्राय. हर एक बात में मिल जाते हैं, तथापि अधिकांश आदमियों के सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि केवल जीवनोपयोगी पदार्थों के प्राप्त करने के ही योग्य आय रखने वाले को कुछ त्याग करने में बहुत कष्ट होता हैं, और उससे अधिक आय वाले आदमी को उतना ही त्याग करने में अपेक्षाकृत कम कष्ट होता है। उदाहरणार्थ दो परिवारों में पांच पांच आदमी है, उनमें से एक परिवार की वार्षिक आय दो हजार रुपये है, (जो उस के जीवन निर्वाह के लिये आवश्यक समझी जाती है) और दूसरे परिवार की इस से अधिक दृष्टान्तवत् चार हजार रुपये है। यदि दोनों परिवारों को कर

स्वरूप ३० । ३० रुपये राज्य-कोष में देने पड़ें तो कर की मात्रा प्रकट में बराबर दीखने पर भी पहले को कर भार बहुत अधिक मालूम होगा। अच्छा, यदि दो हज़ार रुपये की आय वाले पर तीस रुपया और चार हजार रुपए की आय वाले पर साठ रुपया कर रहे, तो क्या दोनों को कर भार समान प्रतीत होगा? सम्भतः चार हज़ार रुपये की आय वाले परिवार को साठ रुपया देना इतना न अखरे जितना दो हज़ार रुपये की आय वाले परिवार को तीस रुपया देना अखरता है; क्योंकि चार हज़ार रुपये की आय वाला अपनी विलासिता की एकाध सामग्री का उपभोग त्याग कर के अपना कर चुका सकता है, इसके विपरीत दो हजार वाले को अपनी जीवन निर्वाह की आवश्यकताओं में कमी करनी पड़ती है।

इस विचार से कर वर्द्धमान होना चाहिये। अर्थात् कर-दाता की आय जितनी अधिक हो, उस पर उतनी ही अधिक ऊंची दर से कर लगे। यह आवश्यक नहीं कि प्रत्येक ही कर वर्द्धमान हो, विविध प्रकार के सब करों को मिला कर हिसाब लगाने में ही इस नियम को व्यवहार किया जा सकता है। बहुत से उदाहरणों में ग़रीब लोगों पर जीवनोपयोगी पदार्थों का कर तो अमीर लोगों के समान ही पड़ता है परन्तु अमीरों पर विलासिता के पदार्थों का कर ज्यादा होने से उनसे लिये हुए कुल करों का योग ऊंची दर से वसूल किया हुआ सिद्ध होता है।

मि० आडम स्मिथ ने इस नियम में कहा है कि आदमियों को अपनी उस आय के अनुपात में कर देना चाहिये, जो राज्य-संरक्षण में उन्हें पृथक् पृथक् प्राप्त है। इससे यह ध्वनि निकलती है कि आदमियों को राज्य से जितना लाभ पहुंचता है, उसके बदले में उसी अनुपात से उन्हें राज्य को कर देना चाहिये। इस विषय में बहुत बाद बिवाद हुआ है। मि० वाकर का कथन है कि राज्य संरक्षण से अधिकतर लाभ तो दुर्बल और रोगी आदि पाते हैं और ये लोग राज्य संरक्षण के अनुपात से कर देने में सर्वथा असमर्थ हैं। साथ ही यह हिसाब लगाना भी तो बहुत कठिन है कि भिन्न २ व्यक्तियों की जान और माल का राज्य द्वारा कितना संरक्षण होता है। इस प्रकार इस नियम के इस अंश के अनुसार व्यवहार होना दुस्साध्य है।

दूसरा नियम; स्पष्टता और निश्चितता—

"किसी व्यक्ति को जो कर देना पड़े वह निश्चित हो, अंधाधुंध न हो। कर देने वाले तथा अन्य आदमियों को कर देने का समय और कर की मात्रा स्पष्ट रूप से मालूम होनी चाहिये।"

यह नियम समझना आसान ही है। कर देने का समय और करकी मात्रा, कर वसूल करने वाले की इच्छानुसार बदल-जाना उचित नहीं है। यदि कर की मात्रा स्पष्ट और निश्चित न रहेगी तो अधिकारी कुछ अधिक कर वसूल कर के स्वयं खा सकता है। पुनः यदि कर देने का समय पहिले से मालूम

नहो तो कर-दाता अपने कर की रक़म समय पर तैयार न रख सकेगा और अधिकारियों का समय वृथा नष्ट होगा।

इस स्पष्टता सम्बन्धी नियम के अनुसार प्रत्येक कर प्रत्यक्ष होना चाहिये, परोक्ष कर कोई रहे ही नहीं। परन्तु आज कल प्रत्येक राज्य कुछ न कुछ परोक्ष कर लेता ही है। इंगलैंड में लगभग ५० फी सदी कर परोक्ष होता है, भारत में तो और भी अधिक। यहां केन्द्रीय और प्रान्तीय दोनों प्रकार के करों को मिला कर लगभग २२० करोड़ रुपया प्रतिवर्ष वसूल किया जाता है। मालगुज़ारी को प्रत्यक्ष कर माना जाय या परोक्ष, इस विषय में मत भेद है। परन्तु इसे भी प्रत्यक्ष कर को गणना में सम्मिलित कर लिया जाय तो भी यहां कुल मिला कर केवल ५५ करोड़ रुपये से भी कम अर्थात् २५ फी सदी आय से भी कम रकम, प्रत्यक्ष करों से वसूल होती है, शेष ७५ फी सदी से अधिक रकम परोक्ष करों से ली जाती है।

इस नियम का यह भी आशय है कि राज्य, प्रजा से किसी प्रकार का उपहार या भेंट आदि न ले, क्योंकि वह परोक्षा कर में गिनी जायगी।

तीसरा नियम; सुबिधा—"प्रत्येक कर ऐसे समय में और ऐसी विधि से वसूल किया जाना चाहिये कि कर देने वालों को अधिकतम सुविधा हो।"

इसी नियम के अनुसार बहुधा पदार्थों की थोक जिन्सों पर

ही कर लगाया जाता है, फुटकर जिन्सों पर नहीं, क्योंकि इससे उसके एकत्र करने में बहुत असुविधा होती है।

यद्यपि अन्ततः प्रत्येक पदार्थ पर लगाया हुआ कर उस पदार्थ के उपभोक्ता पर पड़ता है, तथापि यदि कर उपभोक्ताओं से लिया जाय तो एक तो वह फुटकर रूपमें वसूल करना बहुत कठिन होगा; दूसरे सम्भव है, कर का प्रत्यक्ष अनुभव करके कुछ उपभोक्ता उस पदार्थ को खरीदें ही नहीं। इस लिये पदार्थों पर लगाया हुआ कर उपभोक्ताओं से न लिया जाकर थोक दुकानदारों (वेचने वालों) से वसूल कर लिया जाता है।

प्रत्येक कार्य किसी खास समय में ही बड़ी सुविधा से हो सकता है। समय पर ही कर देने में बहुत सुविधा होगी। किसानों को लगान देने की सुविधा उस समय होती है जब उनकी फसल तैयार होकर उपज संग्रह कर ली जाय।

चौथा नियम; मितव्ययिता---"प्रत्येक कर इस प्रकार लगाया जाना चाहिये कि राज्य-कोष में आने वाली रकम से ऊपर कर-दाताओं के पास से न्यून से न्यून धन लिया जावे।"

इस का आशय यह है कि प्रजा से वसूल की हुई कर की आमदनी का अधिक से अधिक भाग सरकारी ख़जाने में जमा होजाय; अर्थात् कर वसूल करने का खर्च कम से कम हो, बहुत

अधिक अधिकारियों को केवल इसी काम के लिये न रखना पड़े।

इस नियम के अन्तर्गत यह बात भी आजाती है कि कर प्रायः देश के कच्चे पदार्थों पर न लगाया जाकर बिक्री के लिये तैयार किये हुए माल पर ही लगाना चाहिये। उदाहरण के लिये, कर रूई पर न लगा कर उसके बने हुए कपड़े आदि पर लगाना अच्छा होगा। कपड़ा बनने तक रुई कई सौदागरों के हाथों से गुज़रती है। यदि रुई पर कर लगा तो कर-दाताओं को तो बहुत हानि होगी और सरकारी कोष में थोड़ा रुपया पहुंचेगा। कल्पना करो कि "क" ने रुई पर १००० रु० कर दिया तो जब वह इसे "ख" को बेचेगा तो अपनी रुई पर लगी हुई रकम और उसका मुनाफा लेने के अतिरिक्त यह १००० रुपये की रकम और इसका सूद भी लेगा। यदि सूद की दर दस फी सदी हुई तो वह "ख" से सूद सहित ११०० रु० और लेगा इसी प्रकार "ख" अपने ग्राहक "ग" से १२१० रु० और लेगा। इसतरह असली कर की रकम पर चक्रवृद्धि व्याज (सूद दर सूद) लगता रहेगा। सम्भव है, अन्तिम ग्राहक को २००० रु० के लगभग देने पड़ें, जब कि सरकारी खज़ाने में केवल एक हजार रुपये ही पहुंचे हैं। इसे बचाने का उपाय यही है कि कच्चे पदार्थों पर कर न लगाये जाने का नियम हो, और कर केवल तैयार माल पर ही लगाया जावे।

स्मरण रहे यह बात हम ने देश के आन्तरिक व्यापार के

सम्बन्ध में ही कही है । निर्यात के कच्चे पदार्थों पर कर लगाना बहुत लाभकारी होता है, उससे देश के उद्योग धन्धों को उत्तेजना मिलती है ।

कुछ अन्य नियम—मि० आडम स्मिथ के नियमों का वर्णन हो चुका। इनके अतिरिक्त कुछ अन्य विचारणीय नियम ये हैं—

१—करों की संख्या अधिक होने से उनका भार अपेक्षाकृत कम मालूम पड़ता है, यदि अधिक आय प्राप्त करनी हो तो करों की संख्या बढ़ाना उत्तम होगा। तथापि बहुत छोटे छोटे करों का लगाया जाना उचित नहीं, उनके वसूल करने में खर्च और परिश्रम बढ़ेगा ! किसी एक कर का भार भी इतना अधिक न हो कि वह असह्य हो चले ।

२—कर निर्धारित करने का सबसे अच्छा ढंग वह है जो यथेष्ट लोचदार हो, जो देश की सुख समृद्धि की वृद्धि के साथ करों से होने वाली आय को बढ़ा दे और उसके कम होने के साथ इसे घटा दे। कर सदैव देश काल की परिस्थिति के अनुसार घटते बढ़ते और बदलते रहने चाहिये।

कर निर्धारित करने का विषय बड़ा गहन है, अतः इसका निश्चय करने से पूर्व आगे पीछे का भली भांति विचार कर लेना चाहिये। जहां तक सम्भव हो, ऐसे कर न लगें जिनसे एक ओर तो थोड़ी सी आय होती हो, परन्तु दूसरी ओर परोक्ष रूप में सार्वजनिक हित की बहुत हानि हो जाय।

करों का विवेचन

एकाकी कर (Single tax)—आज कल साधारण आदमी भी यह जानते हैं कि कर कई प्रकार के लगते हैं और एक ही कर से काम नहीं चल सकता। तथापि समय समय पर कुछ महाशय एकाकी कर के पक्ष में रहे हैं। इसमें कई दोष हैं। इससे होने वाली आय सुगमता पूर्वक नहीं बढ़ायी जा सकता। जिस श्रेणी के पदार्थों या जिस प्रकार की आय पर यह कर लगाया जाय, यदि उससे यथेष्ठ धन संग्रह न हो तो किसी दूसरी जगह से उसकी पूर्ति करने की सुविधा नहीं होती। इस प्रणाली से उद्योग धन्धों की उन्नति के लिये या मादक पदार्थों का व्यवहार कम करने के लिये विविध प्रकार के कर नहीं लगाये जा सकते। दरिद्र और समृद्ध जनता से एकाकी कर उचित मात्रा में वसूल नहीं किया जा सकता। अस्तु, यह प्रणाली व्यवहार में लाना अत्यन्त असुविधा जनक है।

आधुनिक राजस्व नीति में यह विचार रखा जाता है कि

करों से राज्य को आमदनी तो यथेष्ट हो जावे, परन्तु कर देने वालों को करों का भार यथासम्भव कम प्रतीत हो। इस विचार से दो प्रकार के कर लगाये जाते हैं, (१) प्रत्यक्ष (Direct) कर और (२) परोक्ष (Indirect) कर।

प्रत्यक्ष कर—वह कर प्रत्यक्ष कर है, जो उसी आदमी से लिया जाता है, जिस पर उसका बोझ डालना अभीष्ट हो। यह कर देते समय कर-दाता यह भली भांति जान लेता है कि उसने अपनी आय में से इतना रुपया इस रूप में सरकारी कोष में दिया अथवा आय के अमुक अनुपात में सरकार को सहायता पहुंचायी। उदाहरणवत् ज़मीन का लगान, आय कर, आदि प्रत्यक्ष कर हैं।

परोक्ष कर—परोक्ष कर उस कर को कहा जाता है, जिसको उसके चुकाने वाले औरों पर डाल देते हैं। व्यापारी, आयात और निर्यात पर जो महसूल देते हैं उसे माल बेचने के समय वह अपने ग्राहकों से वसूल कर लेते हैं। व्यवहारोपयोगी चीज़ों-कपड़े, नमक, शराब, अफीम आदि के कर सभी परोक्ष कर हैं। ये कर देते समय लोगों को प्रत्यक्ष कष्ट नहीं होता। परन्तु सरकार को इनके व्यापार व व्यवसाय के लिये तरह तरह के नियम बनाने पड़ते हैं, किस रास्ते से व्यापार का माल जाना चाहिए, किस जगह उसे बेचना चाहिए, किस रीति से व्यापार होना चाहिए, किस चीज़ को कौन व्यक्ति बनाए, अथवा किस स्थान पर और कितनी बनाए, इत्यादि।

प्रत्यक्ष करों से लाभ हानि—प्रत्यक्ष करों के मुख्य लाभ ये हैं—

१—इनसे प्रत्येक आदमी को ठीक ठीक मालूम हो जाता है कि उसे राज्य को क्या देना है।

२—इन्हें वसूल करने में परोक्ष कर की अपेक्षा अधिक सुगमता तथा मितव्ययिता होती है।

इन करों से मुख्य हानियां निम्न लिखित हैं—

क—कर दाता को ये कर बुरे लगते हैं।

ख—साधारणतः सब आदमियों पर और विशेषतया गरीबों पर प्रत्यक्ष कर लगाना कठिन होता है।

ग—इन करों से होने वाली आय को घटाने बढ़ाने की बहुत गुंजायश नहीं होती।

घ—यदि ये कर बहुत भारी हों तो इन से लोगों के, बचत करने में, निरुत्साहित होने की सम्भावना होती है।

परोक्ष करों से लाभ हानि—परोक्ष करों के मुख्य लाभ ये हैं—

१—कर दाता को यह बहुत कम अखरते हैं। जब तक कि ये बहुत ज़्यादह न हों। उसे इनका भार मालूम नहीं होता।

२—हर एक आदमी पर उसकी सामर्थ के अनुसार कर लगाये जा सकते हैं।

३—परोक्ष कर ऐसे समय पर लिये जाते है जो कर-दाताओं को सुविधा जनक हो।

४—इनसे होने वाली आयको घटाने बढ़ाने की विशेष गुंजायश होती है और समृद्धि काल में जब कि जनता को विविध पदार्थों की मांग बढ़ती है, यह आय स्वयमेव बढ़ जाती है।

इनसे मुख्य हानियां निम्न लिखित हैं—

(क) परोक्ष करों को वसूल करने में कठिनाई और खर्च बहुत होता है।

(ख) कुछ पदार्थों पर कर लगाने से किसी उद्योग धन्धे को नुक़सान पहुंचने की सम्भावना रहती है।

(ग) मंहगी होजाने की दशा में करों से प्राप्त होने वाली आय में अचानक कमी हो जाने की सम्भावना होती है।

(घ) करों से बचने के लिये लोगों को माल छिपा कर ले जाने का प्रलोभन अधिक होता है।

मिश्रित कर पद्धति—आधुनिक राज्यों में प्रत्यक्ष और परोक्ष करों को समुचित मात्रा में मिला कर ही आय प्राप्त की जाती है। इस पद्धति से निम्न लिखित लाभ हैं—

१—इससे, प्रत्यक्ष करों से होने वाली अप्रियता कम हो जाती है।

२—परोक्ष करों से उद्योग धन्धो को जो हानि हो सकती है, वह इस पद्धति से कम होजाती है।

३—इस पद्धति में आय के घटाने बढ़ाने का गुंजायश रहती है, और कर-दाताओं को विशेष असुविधा पहुंचाये बिना, कर की दर घटायी और बढ़ायी जा सकती है।

करों का वर्गीकरण—मि० आडम स्मिथ के पहिले नियम से मालूम होता है कि उनके विचार से कर, आय में से दिया जाता है। इस लिये वह करों का वर्गीकरण आय के श्रोतों—लगान, मज़दूरी और मुनाफे के अनुसार करते हैं। परन्तु यह पर्याप्त नहीं है। ठीक ठीक वर्गीकरण तो है भी बहुत कठिन, तथापि निम्न लिखित प्रकार से करों को विभक्त करना विवेचन के लिये सुविधाजनक होगा--

१—मालगुज़ारी।

२—पदार्थों पर कर; इन पर कई दृष्टियों से विचार होता है।

३—आय कर।

४—जायदाद और पूंजी पर कर।

५—पारस्परिक व्यवहार, माल ढुलाई, आबपाशी आदि व्यापारिक कार्यों का कर।

६—स्टाम्प

अब इन में से एक एक पर क्रमशः विचार किया जाता है।

१—मालगुज़ारी—यह कर सब करों से प्राचीन है। राज्य की आय का पहिले यही प्रधान साधन था। व्यवसायिक दृष्टि से अवनत देशों में अब भी इसका बड़ा महत्व है। कहीं कहीं तो इस कर की मात्रा ज़मीन की उपज के एक निश्चित अनुपात से ली जाती है और कहीं कहीं वह भूमि के क्षेत्रफल के हिसाब से लगायी जाती है। इन में पहली प्रकार की आय भूमि की उपज के अनुसार घटायी बढ़ायी जा सकती है, दूसरी नहीं। कभी कभी ऐसा भी किया जाता है कि भिन्न भिन्न प्रकार की फसल वाली भूमि पर, क्षेत्रफल के अनुपात से कर की दर अलग अलग निश्चित करदी जाती है। इससे कृषकों के स्वार्थत्याग की समानता का मोटा अनुमान हो जाता है।

भारतवर्ष में सरकार, भूमि से होने वाली आय पर, कर उस अनुपात से नहीं लगाती, जिससे अन्य आय पर लगाती है। यहां वह किसानों से बहुत अधिक मालगुज़ारी वसूल करती है, अपने इस काम के जायज़ दिखाने के लिये, वह अपने आप को यहां की भूमि का मालिक कहती है। परन्तु भूमि का मालिक असल में वही समझा जाना चाहिये, जो उस पर चिरकाल से खेती करता आया है, जिसने अपने परिश्रम से उसे उपजाऊ बनाया हो या जिसने उसके दाम देकर उसे ख़रीदा हो। सरकार अपनी आवश्यकता के लिये जनता की अन्यान्य आय की भांति ज़मीन से होने वाली आय पर भी कर लगा ले। अन्य

देशों में जहां सरकार अपने आप को ज़मीन का मालिक नहीं समझती, वहां ऐसा ही किया जाता है,

लगान पर लगाया हुआ कर ज़मीन के मालिक पर ही पड़ता है, वह इसे किसी और पर नहीं डाल सकता। इस कर के कारण वह अपनी भूमि से उत्पन्न अन्न आदि पदार्थ का मूल्य नहीं बढ़ा सकता, क्योंकि यह चीज़ें तो बाजार भाव से बिकेंगी। *

इस सम्बन्ध में श्री पं० महावीर प्रसाद जी द्विवेदी अपने "सम्पत्ति शास्त्र" में लिखते हैं कि "लगान पर जो कर लगाया जायगा वह हमेशा ज़मीन के मालिक ही को देना पड़ेगा। हिन्दुस्तान में प्रायः सारी ज़मीन की मालिक सरकार है और कर भी सरकार ही लगाती है। इससे वह अपने ऊपर कर लगाने से रही। हां, जहां जहां ज़मीदारी, ताल्लुकेदारी, या इनामदारी, प्रबन्ध है, वहां वहां यदि लगान पर कर लगाया जाये तो ज़मीन के मालिकों को ही देना पड़े। यथार्थ में जो लगान सरकार या ज़मींदार को देना पड़ता है वह भी एक

*पदार्थों का भाव अन्ततः ऐसी निकृष्ट भूमिके उत्पादन व्यय के अनुसार निश्चित होता है, जिस में खेती करने से खर्च और मज़दूरी आदि ही निकलती है, और कुछ मुनाफा नहीं रहता। उक्त उत्पादन व्यय बाज़ार भाव से कम नहीं होगा, क्योंकि यदि ऐसा हो तो उससे भी खराब भूमि में खेती होने लगे। उत्पादन व्यय बाजार भाव से अधिक भी नहीं रह सकता, क्योंकि नुकसान उठा कर चिरकाल कौन खेती करेगा?

प्रकार का कर ही है। लगान के रूप में कर लेकर ही सरकार या ज़मींदार लोग अपनी ज़मीन किसानों को जोतने के लिए देते हैं। हिन्दुस्तान की प्रजा से यहां की गवर्नमेंट हर साल कोई २७ करोड़ रुपया * कर लगान के नाम से वसूल करती है। यदि यह कर न लगता तो इतना रुपया प्रजा से और कोई कर लगा कर वसूल किया जाता, क्योंकि बिना रुपये के गवर्नमेंट का राज्य प्रबन्ध न चलता।"

अपने आपको ज़मीन का मालिक कह कर ब्रिटिश सरकार भारतवर्ष की मालगुजारी को खास तौर से अपनी आमदनी समझती है, और देश रक्षा का निमित्त बनाकर उसे फ़ौज में खर्च करना उचित समझती है। सम्भवतः फौज से इतनी इस देशकी रक्षा नहीं होती जितनी एशिया महाद्वीप में बरतानिया की शक्ति की रक्षा होती है।

२—**पदार्थों पर कर**—ये कर दो प्रकार के होते हैं—

(क) जीवनोपयोगी पदार्थों पर कर

(ख) विलासिता के पदार्थों पर कर

जीवनोपयोगी पदार्थों पर लगाए हुए कर उपभोक्ताओं पर पड़ते हैं। दरिद्र से दरिद्र आदमी भी इन करों से बच नहीं सकता। इस लिये बहुत से अर्थ शास्त्र-वेत्ताओं की यह राय है कि यथा सम्भव यह कर न लगाये जावें। इन से पदार्थों का मूल्य चढ़ जाता है और निर्धनों का कष्ट बढ़ जाता है।

* अब यह मात्रा बढ़ कर ३६ करोड़ रुपये हो गयी है लेखक—

विलासिता के पदार्थों पर लगे हुए करों में यह बात नहीं होती। इन पदार्थों के ख़रीदने वाले प्रायः अमीर लोग होते हैं जो कर को सुगमता पूर्वक सहन कर सकते हैं। कभी कभी ऐसा भी होता है कि जब इन पदार्थों पर कर अधिक बढ़ जाते हैं तो मध्यश्रेणी के आदमी इन का उपभोग कम कर देते है। इस से इन पदार्थों की उत्पत्ति कम हो जाती है। ये कर कुछ अंश में उपभोक्ताओं पर और कुछ अंश में उत्पादकों पर पड़ते हैं।

विदेशी व्यापार पर कर—विदेशी व्यापार में आयात और निर्यात दोनों ही प्रकार का माल सम्मिलित है। इस पर कर लगाने के दो उद्देश्य हो सकते हैं, (१) कर का भार विदेशियों पर पड़े और (२) विदेशी माल की आयात घटा कर स्वदेशी उद्योग धधों की उन्नति की जाय। इस दूसरे उद्देश को ध्यान में रख कर जो कर निर्धारित किये जाते हैं, वे संरक्षण कर कहलाते हैं; ऐसे व्यापार को संरक्षित व्यापार, और ऐसी व्यापार नीति को संरक्षण नीति कहते हैं। इसके विपरीत जब विदेशी व्यापार पर कर लगाने से केवल आय प्राप्त करना ही अभीष्ट हो (विदेशी आयात को कम करना नहीं), उस व्यापार को मुक्त-द्वार व्यापार कहते हैं।

आयात माल में केवल उन्हीं तैयार पदार्थों पर कर लगाना विशेष लाभकारी हो सकता है जिसके बनाने के साधन अपने यहां मौजूद हों और जिनके तैयार करने में अभी नहीं तो कुछ

समय पीछे लाभ होने की सम्भावना अवश्य हो। इस कर का भार साधारणतया अपने ही देश पर पड़ता हैं, तथापि यदि बिदेशी माल कोई जीवनोपयोगी नहीं है और स्वदेश के कुछ अच्छी संख्या के आदमी उसके बिना निर्वाह कर सकते हैं तो कर लगने से जब वह माल मँहगा होगा, तो उसकी मांग एवं आयात कम हो जायगी। ऐसी दशा में आयात माल पर लगे हुए कर का प्रभाव अवश्य ही पड़ेगा। उदाहरणवत् भारतवर्ष में बहुत सा विदेशी माल ऐसा ही आता है जिसके बिना यहां के आदमियों को अपने जीवन निर्वाह में विशेष असुविधा न होगी। ऐसे विदेशी माल पर—सूत, रुई के कपड़े, शक्कर, लोहे फ़ौलाद के सामान की आयात पर भारी कर लगना चाहिये जिससे वह यहां तैयार किये हुए वैसे सामान से मँहगा पड़े और इस देश में स्वदेशी को उत्तेजना मिले।

निर्यात कर विदेशियों पर पड़ते हैं। ये कर उनहीं देशों में सफलता पूर्वक लगाये जा सकते हैं जिनकी उपज की बाहर वालों को अत्यन्त आवश्यकता हो। यदि ऐसा न होगा तो कर लगने से विदेशी मांग घट जायगी और कर का प्रभाव निर्यात करने वाले देश पर भी पड़ेगा। भारतवर्ष के रुई और जूट आदि कच्चे पदार्थों की इंगलैण्ड के कारखाने वालों को अत्यन्त आवश्यकता रहती है, और इन पदार्थों की निर्यात पर सफलता पूर्वक कर लगाया जा सकता हैं। परन्तु अपनी वर्तमान राजनैतिक परिस्थिति के कारण भारत सरकार इस सम्बन्ध में

अपनी नीति स्थिर करने में स्वतन्त्र नहीं है, उसे ब्रिटिश पार्लि-मेंट की आज्ञा शिरोधार्य है, और ब्रिटिश पार्लिमेंट इंगलैंड के व्यापारियों के हित का लक्ष्य रखती ही है।

कच्चे पदार्थों के अतिरिक्त यहां की खाद्य पदार्थों की निर्यात पर भी भारी कर लगाये जाने की आवश्यकता है, जिससे उनका यहां ही यथेष्ट उपयोग हो सके।

देशी माल पर कर—जब कोई राज्य संरक्षण नीति के पक्ष में न हो और आय के वास्ते किसी विदेशी वस्तु पर कर लगाये तो उसे स्वदेश की भी उस प्रकार की वस्तु पर कर लगाना होता है। भारतवर्ष में यहां के सूत और कपड़े पर घातक कर इसी विचार से शुरू हुआ है। सन् १८९४ ई० में भारत सरकार ने विलायती कपड़ों पर ५ फी सैकड़ा कर लगाया, तो इस के साथ ही देशी सूत पर और देशी मिलों में तैयार होने वाले कपड़ों पर भी इतना ही टैक्स लगा दिया। लंका-शायर के व्यापारियों के असन्तुष्ट होने के कारण सन् १८९६ ई० में विदेशी कपड़ों पर महसूल ५) से घटा कर ३॥) सैकड़ा किया गया, तब भारत की मिलों में बने हुए कपड़ों पर भी इतना ही कर निर्धारित किया गया। इस समय विलायती कपड़े पर कर बढ़ा हुआ है। भारत के बने कपड़े पर फी सैकड़ा कर साढ़े तीन जारी है, यह कर सर्वथा अनुचित है।

देशी माल पर कर दो प्रकार से लगते हैं—(क) उत्पत्ति का निरीक्षण करके और (ख) उत्पत्ति पर राज्य-एकाधिकार

करके। राज्य का लक्ष्य यह होता है कि कर-भार उपभोक्ताओं पर पड़े। वह उपभोक्ताओं की मांग से उनके कर देने की शक्ति का अनुमान करता है।

नशे के पदार्थों पर कर—बहुत से देशों में आन्तरिक व्यापार के पदार्थों में से केवल विलासिता के पदार्थों पर ही कर लगाया जाता है, जिससे उस कर का भार अमीरों पर ही पड़े। बहुधा नैतिक लक्ष्य भी रखा जाता है और उन मादक अथवा अन्य पदार्थों पर कर लगाया जाता है जो जनता के स्वास्थ या आचार विचार में बाधक हों। भारतवर्ष में भंग, चरस, अफीम, शराब आदि मादक पदार्थों पर कर लगाया जाता है, परन्तु उसमें राज्य का उद्देश्य केवल आय-प्राप्ति है, अन्यथा प्रजा-हित के लिये तो सरकार को चाहिये कि इन पदार्थों को कम मात्रा में तैयार कराये, उनके बेचने वालों को बड़ा सावधानी से लैसेंस दे, दुकानें बस्ती से बाहर और बहुत थोड़ी रखे तथा कर भी भारी लगाये। तब जाकर इनका व्यवहार घटने की आशा हो सकती है। यहां मादक पदार्थों को बनाने या तैयार करने का सरकार का प्रायः एकाधिकार है। इनकी बिक्री से जो आय होती है, उसमें से उत्पादक व्यय निकालने पर जो शेष रहे, वह सरकारी मुनाफ़ा होता है, और आय में सम्मिलित होता है।

३—आय कर—ज़मीन से होने वाली आय को साधा

रणतः अन्य आय से पृथक ही माना जाता है । उसका पहिले वर्णन हो चुका है। अन्य आय बिशेषतः मुनाफ़े या मज़दूरी (वेतन) से होती है। आय पर लगा हुआ कर प्रायः प्रत्यक्ष होता है।

मुनाफ़े की आय पर कर लगाने में बड़ी असुविधा यह होती है कि यह आय निश्चित नहीं होती। इस लिये इस कर की रक़म बदलती रहनी चाहिये, परन्तु यह है, कठिन । अतः बहुधा ऐसा होजाता है कि किसी पर तो यह कर आवश्यकता से अधिक लग जाता है और किसी पर कम। यह कर, कर-दाता पर ही पड़ता है, परन्तु इस कर के कारण पूंजी की वृद्धि में बाधा होती है और इस बात का असर मज़दूरी पर पड़ता है।

मज़दूरी पर लगा हुआ कर मज़दूरों को देना होता है, परन्तु कभी कभी वे इस कर के लगने से अपनी मज़दूरी बढ़वा कर अन्ततः इसे अपने मालिकों पर डाल सकते हैं। इस दशा में उसका प्रभाव मुनाफ़े पर पड़ेगा।

थोड़ी थोड़ी मज़दूरी पाने वालों पर कर लगाने से उसे वसूल करने में बड़ी असुविधा होती है । प्रायः यह सिद्धान्त माना जाता है कि जितनी आमदनी जीविका निर्वाह के लिये आवश्यक समझी जाय, उस पर कर न लगाया जाय । ब्रिटिश भारत में अब दो हजार रुपये से कम वार्षिक आय पर कर नहीं लगाया जाता। हां इतनी या इससे अधिक आय होने पर, पूरी

आय पर कर लगता हैं, यह नहीं कि जितनी इससे अधिक हो उसी पर लगे। अस्तु, इस प्रकार साधारण मज़दूरी (वेतन) पाने वालों पर यह कर लगने का प्रसंग नहीं आता। हां; उन्हें खाने पहिनने के बहुत से पदार्थों पर विविध कर देने ही पड़ते हैं।

पहिले यह बता चुके हैं कि सब करों की कुल मात्रा वर्द्ध-मान होनी चाहिये, अर्थात् किसी आदमी की आमदनी ज्यों ज्यों बढ़ती जाय, उस पर कर की कुल मात्रा का अनुपात भी बढ़ता जाय। पृथक् पृथक् कर की दृष्टि से यह बात सबसे अधिक आय-कर के सम्बन्ध में निभाई जाती है। इस सम्बन्ध में भारतवर्ष का उदाहरण अन्यत्र दिया गया है।

४—जायदाद और पूंजी पर कर—यह कर लगाना बहुधा बहुत कठिन होता है। स्थिर जायदाद के मूल्य का अनु-मान करने में तो विशेष असुविधा नहीं होती, परन्तु अस्थिर की मालियत का अनुमान करना दुस्तर है। लोग छल कपट से इस के कर से बचने के लिए इसे छिपा लेते हैं। इस लिये भूमि और मकान के अतिरिक्त यह कर मृत्यु-कर या विरासत-कर के स्वरूप में ही लगाया जाता है। जब किसी आदमी की जायदाद उसके मरने पर उसके उत्तराधिकारी को मिलती है और उसपर कर लगाया जाता हैं, तो उस कर को मृत्यु-कर (Death duty) या विरासत कर (Succession duty) कहते हैं। यह प्रायः बहुत हल्का और क्रमशः वर्द्धमान रखा जाता है। यह उन आदमियों पर

पड़ता है जो उस जायदाद के अधिकारी नहीं हुए जिन पर कर लगाया जाता है, इस लिये यह उन्हें बहुत अखरता नहीं। यह कर जिस किसी पर लगाया जाता है, प्रायः उसी को देना होता है, वह इसे हटाकर किसी और पर नहीं लगा सकता। परन्तु जब यह कर किसी ऐसी जायदाद या पूंजी पर लगे जो उधार दी जासके तो यह बहुधा ऋण लेने वालों पर पड़ता है।

यदि पूंजी पर भारी कर लगा दिया जाय तो लोगों में संचय के प्रति निरुत्साह, अथवा अपनी संचित पूंजी को विदेशों में लगाने का अनुराग हो सकता है। इससे देश में पूंजी की कमी होकर उद्योग धन्धों को धक्का पहुंचेगा।

मकान-कर—पहले मकानों पर कर उस भूमि के साथ ही लगा लिया जाता था, जिस पर वे होते थे। अब यह कर अलग लगाया जाता है। यह बहुधा मकान के मालिक पर न पड़ कर उसके किरायेदार पर पड़ता है, क्योंकि मालिक किराये के साथ ही प्रत्यक्ष अथवा गौण रूप से इसे वसूल कर लेता है। भारतवर्ष में इस कर से होने वाली आय केन्द्रीय या प्रान्तीय राजस्व में सम्मिलित नहीं होती, वरन् स्थानीय राजस्व में गिनी जाती है।

४—पारस्परिक व्यवहार, माल ढुलाई और आबपाशी आदि पर कर—कुछ देशों में रेल, जहाज़, नहर, डाक, तार आदि पारस्परिक व्यवहार, माल ढुलाई और

आबपाशी आदि के साधनों पर राज्य का अधिकार है। यदि इन व्यापारिक कार्यों से मुनाफा होता हो, तो यह स्पष्ट ही है कि इन कार्यों के संचालन में जितना व्यय होता है, उसकी अपेक्षा प्रजा से अधिक धन वसूल किया जाता है। राज्य की यह आय भी कर ही समझनी चाहिये, क्योंकि यह राज्य के कार्यों में ख़र्च होती है, यदि यह आय न हो, तो राज्य अन्य प्रकार के करों से प्रजा से आय प्राप्त करके अपना कार्य चलाता।

कुछ आदमी इस कर को बहुत अच्छा समझते है, कारण कि यह उन लोगों पर पड़ता है जो इसे देना सहन कर सकते हैं। परन्तु यदि फजूलख़र्ची होती हो या मुनाफ़ा अधिक रहता हो तो यह कर-भार भी प्रजा को बहुत दुसह्य हो जाता है, और इससे व्यापार आदि में बाधा हो सकती है। भारतवर्ष में रेलों और जहाज़ों की कम्पनियां बहुत पक्षपात करती हैं और यहां के कच्चे माल की निर्यात और विदेशी तैयार माल की आयात पर अपेक्षाकृत कम महसूल लेकर उन्हें उत्तेजित करती हैं और भारतीय उद्योग धन्धों के लिये घातक होती हैं।

डाक और तार की आमदनी भी एक कर ही है। डाक द्वारा बहुतसे आदमी पुस्तकें या अख़बार आदि भी मंगाते हैं, इस लिये इस प्रकार का कर, शिक्षा और साहित्य में बाधक होता है। कुछ लोगों का कहना है कि भारतवर्ष में कार्ड और लिफ़ाफ़े का मूल्य अन्य देशों की अपेक्षा कम है, परन्तु यहां के जन साधारण की आर्थिक स्थिति का विचार करले पर उक्त कथन भ्रम-

पूर्ण सिद्ध हो जाता है। निस्संदेह सरकार ने डाक का महसूल बढ़ाकर प्रजा में शिक्षा-प्रचार में बड़ी रुकावट डाल दी है। इसका विशेष उल्लेख आगे प्रसंगानुसार किया जायगा।

स्टाम्प—यह कर दो प्रकार का होता है, (१) अदालती और (२) ग़ैर अदालती। प्रथम प्रकार में कोर्ट फ़ीस या अदालतों में पेश होने वाले मुकद्दमों के कागज़ व दख़्वांस्तों पर लगाये जाने वाले स्टाम्प की आय सम्मिलित है। दूसरे प्रकार में व्यापार व उद्योग धन्धों सम्बन्धी कागज़ों पर--दस्तावेज, हुंडो, पुर्ज़े, चक, रुपयों की रसीद, आदि पर लगने वाले स्टाम्प की आय होती है।

यह कर प्रायः हल्का ही होता है और इसके वसूल करने में राज्य को विशेष कठिनाई नहीं होती। भारतवर्ष में मुक़द्दमे बाजी का ख़र्च वेहद्द बढ़ गया है. इससे न्याय बड़ा मंहगा होगया है। फिर भी लोगोंका यह व्यसन कम नहीं होरहा है। राज्य को राष्ट्रीय पंचायतों की स्थापना करके मुक़द्दमेबाजी कम एवं न्याय सस्ता और सुलभ करना चाहिये।

हम करोंके मुख्य मुख्य भेदों का विवेचन कर चुके। आगे हम भारतवर्ष में लगने वाले केन्द्रीय और प्रान्तीय सरकारों के एवं स्थानीय संस्थाओं द्वारा लगाये हुये विविध करों की आय तथा उसके खर्च का विचार करेगें। उससे पूर्व भारतीय राजस्व की व्यवस्था का ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक हैं।

भारतीय राजस्व व्यवस्था

प्राक्कथन—भारतवर्ष ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तगत एक अधीन देश है। इससे साम्राज्य को और विशेषतया ब्रिटिश द्वीप को बहुत आर्थिक लाभ है, तथापि भारतवर्ष अपनी आय का कोई भाग नज़राने के तौर पर ब्रिटिश सरकार को नहीं देता, न ब्रिटिश सरकार ही अपने कोष से भारतवर्ष के लिये कभी कुछ खर्च करती है। परन्तु भारतवर्ष अपने राजस्व की व्यवस्था करने में अधिकांश परतन्त्र है।

राजस्व नियन्त्रण; भारतमन्त्री और इंडिया कौंसिल—सन् १८५८ ई० के ऐक्ट से ईस्ट इंडिया कम्पनी और बोर्ड आफ़ कन्ट्रोल हटा दिया गया और उनका भारतीय शासन सम्बन्धी उत्तरदायित्व एक राजमन्त्री को सौंप दिया गया जो ब्रिटिश पार्लिमेंट का सदस्य हो, और इस लिये पार्लियामेंट के नियन्त्रण में रहे। इस राजमन्त्री को भारतमन्त्री, इसके कार्यालय को इंडिया आफिस, और इस की सभा को इंडिया कौंसिल कहते हैं।

उक्त ऐक्ट से ऐसा नियम किया हुआ है कि भारतवर्ष की सब आयका उपयोग केवल भारतसरकार के ही कार्यों के लिये, और इंडया कौंसिल के बहुमत से ही, किया जायगा। इंडया कौंसिल में अब ८ से १२ तक सदस्य रहते हैं और उसका अधिवेशन प्रतिमास एक बार होता है, जिसका सभापति भारतमन्त्री या उनका नियुक्त किया हुआ, कोई कौंसिल का सदस्य होता है ।

इस कौंसिल के बहुमत बिना भारतमन्त्री (१) भारतवर्ष की आमदनी खर्च नहीं कर सकते, (२) ऋण या ठेका नहीं दे सकते और (३) किसी महत्वपूर्ण पद पर किसी कर्मचारी की नियुक्ति नहीं कर सकते ।

कौंसिल का कार्य कई एक विभागों में विभक्त है और प्रत्येक विभाग सम्बन्धी प्रश्नों पर विचार करने के लिये ४, ५ सदस्यों की एक समिति रहती है। इस प्रकार राजस्व विभाग के लिये एक राजस्व समिति नियत है। नियम के अनुसार, यह समिति भारतीय राजस्व सम्बन्धी सर्वोच्च संस्था है।

कौंसिल में दो सदस्य ऐसे होते हैं जो राजस्व सम्बन्धी ज्ञान के वास्ते ही लिये जाते हैं। ये सदस्य प्रायः लन्दन के सर्राफे से व्यक्तिगत सम्बन्ध रखते हैं। इस लिये कौंसिल पर, और कौंसिल द्वारा भारतीय राजस्व पर लन्दन के सर्राफे का प्रभाव पड़ता है।

इंगलैण्डके मन्त्रीमण्डल के सदस्य होने के कारण भारतमन्त्री की नियुक्ति और बरख़ास्तगी वहां के अन्य राज-मन्त्रियों के साथ लगी हुई है।

पार्लियामेंट का सम्बन्ध—भारतमन्त्री भारतीय विषयों में जो अधिकार रखता है, वह पार्लियामेण्ट के नाम से रखता है और अपने सब कामों के लिए उसके प्रति उत्तरदायी है। वह उसके सम्मुख प्रतिवर्ष मई महीने की दूसरी से पन्द्रहवीं तारीख तक भारतवर्ष के आय व्यय का हिसाब पेश करता है और इस बात की सविस्तर रिपोर्ट देता है कि गत वर्ष भारत के विविध प्रान्तों ने कितनी नैतिक या भौतिक उन्नति की है तथा उनकी क्या दशा है।

हिसाब की देख भाल के लिये हाउस आफ कोमन्स की एक समिति बनती है। इस अवसर पर कभी कभी भारतवर्ष की राजनैतिक या आर्थिक स्थिति की विवेचना होती है, और जो नीति काम में लाई गई हो अथवा लाई जाने वाली हो, बतलाई जाती है। जो महाशय भारतीय विषयों में अनुराग रखते हैं, वे सरकार के कामों की आलोचना करते हैं और सुधारों की मांग पेश करते हैं। इसे बजट की बहस कहते हैं। कमेटी का प्रस्ताव केवल रीति पालन के लिये होता है और बहुधा तमाम कार्रवाई शुरू से आख़िर तक बड़ी निरस रहती है।

भारत मन्त्री की कौंसिल के हिसाब की जांच एक निरीक्षक द्वारा की जाती है, जो अपने सहकारियों सहित भारतवर्ष की आय से वेतन पाता है।

वास्तविक आक्रमण-निवारण या आकस्मिक आवश्यकता के अतिरिक्त पार्लियामेण्ट की आज्ञा विना भारतवर्ष की आय, भारतवर्ष की सीमा से बाहर के सैनिक कार्यों में नहीं लगाई जा सकती। परन्तु जैसा कि सैनिक व्यय के प्रसंग में कहा जायगा, पार्लियामेण्ट को आज्ञा मिलने में विशेष बाधा नहीं होती। गत योरपीय महायुद्ध में भारत से जो सेना इङ्गलैण्ड की सहायताके लिये गयी थी, उसका खर्च भारतवर्ष की आय से दिये जाने के लिये पार्लियामेण्ट ने स्वीकृति दी थी। इसी प्रकार युद्ध-ऋण में भारतवर्ष का १५० करोड़ रुपये का दान पार्लियामेण्ट से स्वीकार हुआ था।

भारत सरकार और प्रान्तीय सरकारों का अधिकार—नियम से तो भारतीय राजस्व पर भारतमन्त्री और उसकी कौंसिल का पूर्ण अधिकार है पर व्यवहार में भारत सरकार को अपनी समझ के अनुसार कुछ कार्य करने का अधिकार है। वह निर्धारित सीमा में नया खर्च और अल्प महत्व के नवीन पदों की सृष्टि कर सकती है। प्रान्तीय सरकारों के राजस्व सम्बन्धी अधिकार बहुत कम है और भारत सरकार से समय समय पर भिन्न भिन्न निश्चयों के अनुसार, दिये हुये

हैं। म्युनिसिपैलटियों और स्थानीय बोर्डों के राजस्व सम्बन्धी अधिकार, भारतीय व्यवस्थापक विभाग से मिले हैं।

राजस्व विभाग; हिसाब और जाँच—भारतीय राजस्व विभाग का प्रधान भारत सरकार का राजस्व-सदस्य होता है। यह विभाग भारत-सरकार का बजट बनाना और प्रान्तीय सरकारों के आय व्यय का निरीक्षण करता है। यहाँ सरकारी अफसरों का वेतन उनकी छुट्टी, पेन्शन, भत्ता और पुरस्कार आदि विषयों से सम्बन्ध रखने वाले प्रश्नों पर विचार करता है। और मुद्रा और टकसाल का प्रबन्ध करता है। इसकी एक शाखा सैनिक व्यय की व्यवस्था करती है।

हिसाब विभाग, समस्त देश का मुल्की हिसाब रखता है। इसका प्रधान, 'कंट्रोलर और आडीटर-जनरल' होता है। प्रान्तीय सरकारों का हिसाब प्रान्तीय अकाउंटैंट जनरल रखते हैं। हर एक ज़िले के प्रधान स्थान में कोष रहता है, इसमें सरकारी आय एकत्र होती है और और इससे स्थानीय खर्च की रक़म दी जाती है। कंट्रोलर और आडीटर-जनरल का स्टाफ़ इन कोषों का निरीक्षण करता है।

केन्द्रीय सरकार और प्रान्तीय सरकारों का पारस्परिक सम्बन्ध *—सन् १८३३ ई० तक बम्बई, मद-

*लेखक की 'भारतीय शासन' से।

रास और बंगाल के तीनों महा प्रान्तों में पृथक् पृथक् हिसाब रहता था। उस वर्ष के पेक् से गवर्नर जनरल को समस्त देश के हिसाब के नियंत्रण का अधिकार मिल गया। सन् १८५७ ई० के उपद्रव के पश्चात् मितव्ययिता की अत्यन्त आवश्यकता अनुभव होने लगी और विलसन साहब बड़े लाट की कौंसिल के प्रथम राजस्व सदस्य बनाये गये। सन् १८७१ ई० तक अकेले भारत सरकार को ही धन-प्रबंध के सब अधिकार रहे; जितना रुपया उचित समझती, वह प्रान्तीय सरकारों को ख़र्च करने के लिये देती। इस स्थिति में प्रांतीय सरकार आय वसूल करने के काम में कुछ विशेष उत्साह न लेती थीं, वे भारत सरकार के केवल एजन्ट की भाँति थीं जिन पर कोई उत्तरदायित्व न था, जितना उन्हें मिलने की आशा होती, उससे अधिक वे भारत सरकार से मांगतीं, और जो कुछ हाथ लगता, सब खर्च कर डालती थीं।

सन् १८७१ ई० में लार्ड मेओ ने प्रान्तीय सरकारों में उत्तर-दायित्व का भाव उत्पन्न कर उक्त स्थिति सुधारने की चेष्टा की। उसने पुलिस, शिक्षा, जेल, सड़क, पबलिक मकानात और औषधालय आदिके कार्य प्रान्तीय सरकारों के सुपुर्द किये, और इनके ख़र्च के लिये इन विभागोंकी आय तथा कुछ और सालाना रक़म उन्हें दी जाने लगी। इस आय को प्रान्तीय सरकार अपनी इच्छानुसार ख़र्च कर सकती थीं अगर किसी साल कुछ बचत होती तो वह उन्हें आगामी वर्ष व्यय करने के लिए मिल जाती।

लार्ड लिटन के समय फिर कुछ सुधार हुए। कई प्रान्तों में लगान, शासन और न्याय विभाग का ख़र्च भी प्रांतीय सरकारों को सौंपा गया। इनके लिए उन्हें कई प्रकार की आमदनी दे दी गयी। यह बंदोबस्त हर पांचवें साल बदलता था। पीछे प्रांतीय सरकारों को यह भी संतोषप्रद न हुआ।

सन् १८८२ ई० में बड़े २ प्रान्तों के साथ पुनः नया बंदोबस्त हुआ। अफीम, नमक, आयात-निर्यात-कर की आयत भारत सरकार के लिए रही। जंगल, आबकारी और स्टाम्प की आमदनी भारतीय तथा प्रांतीय सरकारें में बराबर २ बंटने लगी। शेष मद्दों की आमदनी प्रांतीय सरकारें के सुपुर्द कर दी गई। प्रांतीय सरकारें का ख़र्च इतनी आमदनी से भी अधिक होने के कारण भारत सरकार उन्हें उनकी मालगुज़ारी की आय का कुछ निर्धारित हिस्सा देती थी। इस प्रणाली में भी दूषण प्रतीत हुए, हर पांचवें वर्ष दोनें सरकारें में नोक झोंक होती थी।

सन् १९०४ ई० में प्रांतीय सरकारें की आय निश्चित कर दी गई और यह प्रबन्ध किया गया कि अत्यन्त आवश्यकता के अतिरिक्त इसमें कोई परिवर्तन न हो।

सुधारों से पहले की व्यवस्था—सन् १९११ ई० में इस प्रबंध में परिवर्तन किया गया। अफ़ीम, नमक, आयात निर्यात कर, देशी राज्यें के नज़राने, डाक, तार, रेल, टकसाल और सैनिक कार्य्यों की सब आय भारत सरकार के पास रहने लगी, जो इन विभागों के ख़र्च, होम चार्जेज़ (विलायती ख़र्च)

तथा भारत के सार्वजनिक ऋण के सूद की उत्तरदातृ है। अन्य विभागों की आय व्यय भारत सरकार और प्रांतीय सरकारें में बटने अथवा पूर्णतः प्रांतीय रहने का नियम होगया। प्रांतीय सरकारें की आमदनी का दो तिहाई भाग मालज़ारी आबकारी और इनकमटैक्स की आय से वसूल होता था। इन तीनों विभागों का प्रबन्ध दोनें सरकारें के अधीन होगया।

भारत सरकार को जब कुछ बचत होती थी तो वह उसे प्रान्तीय सरकारों को बांट देती थी परंतु प्रान्तीय सरकार उसे भारत सरकार की इच्छानुसार ही खर्च कर सकती थी। उन्हें भारत सरकार के पास कुछ जमा रखना पड़ता था, घाटा पड़ने पर इसी जमा में से उन्हें रुपया दिया जाता था और यदि कुछ बवत होती थी तो वह इसी जमा में शामिल करदी जाती थी। उन्हें क़र्ज़ लेने या नया टैक्स लगाने का अधिकार नहीं था। सरकारी आमदनी का सब रुपया प्रान्तीय सरकारों के हस्ते वसूल होकर भारत सरकार के पास भेज दिया जाता था। आय व्यय निर्द्धारित करने का अधिकार भारत सरकार को ही था। इस प्रकार प्रान्तीय सरकारें राजस्व के विषय में नितान्त परमुखापेक्षी थीं। अब यह बताते हैं कि सुधारों से इस व्यवस्था में क्या अन्तर हुआ।

सुधार स्कीम का सिद्धान्त—सुधार स्कीम के रचयिताओं ने यह सिद्धान्त-स्थिर किया कि यदि प्रान्तीय स्वराज्य के कुछ अर्थ हैं। तो प्रान्तीय उन्नति भारत सरकार पर ही

निर्भर न रहनी चाहिये। भारत सरकार के सम्बन्ध से प्रान्तीय सरकार को जो प्रबन्ध करने में व्यय करना पड़ता है, उसका एक पक्का अन्दाज़ किया जाय। फिर जिन मद्दों की आमदनी से यह ख़र्च चल जाय वे भारत सरकार के अधीन कर दी जांय। बाक़ी जितनी आमदनी बचे वह प्रान्तीय सरकारों के हाथमें रहे और प्रान्तीय उन्नति का काम बढ़ाने की ज़िम्मेदारी भी उन्हीं पर रहे। निदान भारत सरकार और प्रान्तीय सरकारों की आय एवं व्यय की मद्द बिल्कुल पृथक् पृथक् हों।

विविध प्रस्ताव–ब्रिटिश पार्लियामेण्ट की संयुक्त कमेटी ने रिपोर्ट की, कि इस समय जो मद्द सब या कुछ प्रांतों में भाग-युक्त हैं वे ये हैं--मालगुज़ारी, स्टाम्प, इनकम टैक्स और आब-पाशी। उसने प्रस्ताव किये—

(१) स्टाम्प की आमदनी जनरल (तिजारती) और जुडीशल (अदालती) की स्पष्टांकित उप-शाखाओं में आजानी चाहिये; जनरल आमदनी भारत सरकार की, और जुडीशल प्रांतीय सरकारों की होनी चाहिये। इस प्रबन्ध से तिजारती स्टाम्प सब प्रान्तों में एकसा होंगे और दर की कोई गड़बड़ न होगी। प्रान्तीय सरकारों को अदालत की कोर्ट फ़ीस के स्टाम्पों के सम्बन्ध में पूरा अधिकार होगा और इस तरह अपनी आमदनी बढ़ाने का उन्हें और एक साधन मिल जायगा।

(२) आबकारी आय बम्बई, बंगाल और आसाम में

प्रांतीय सरकारों के हाथ में है। सब प्रान्तों में ही ऐसा करने में कोई कठिनाई नहीं है।

(३) ज़मीन की मालगुज़ारी इस समय सब से बड़ी आमदनी है।* इसकी वसूली का देहातों के शासन प्रबंध से इतना घनिष्ठ सम्बन्ध है कि इस पर प्रांतीय सरकारों का ही पूरा अधिकार होना अत्यन्त आवश्यक है ।

(४) अकाल सम्बन्धी ख़र्च और आबपाशी के बड़े २ कामों का ख़र्च ज़मीन की आमदनी से निकट सम्बन्ध रखता है। इस लिये जब ज़मीन की आमदनी प्रांतीय हो जायगी तो ये विषय भी प्रांतीय सरकारों के अधीन होने चाहियें।

(५) इनकम टैक्स की आय भारत सरकार के अधीन

---

* ब्रिटिश भारत में तीन तरह का बन्दोबस्त है—(१) स्थायी प्रबंध; बंगाल में, बिहार के ५/६ भाग में, एवं आसाम के आठवें और संयुक्त प्रांत के दसवें भाग में। (२) ज़मींदारी या ग्राम्य प्रबन्ध; संयुक्त प्रांत में ३० वर्ष और पंजाब तथा मध्य प्रांत में २० वर्ष के लिये मालगुज़ारी निश्चित कर दी जाती है। गांव वाले मिलकर इसे चुकाने के लिये उत्तरदायी होते हैं । (३) रय्यतवारी प्रबंध; बम्बई, सिंध, मदरास, आसाम व बर्मा में एवं बिहार के कुछ भाग में। इन स्थानों में सरकार सीधे काश्तकारों से सम्बन्ध रखती है। बम्बई, मदरास में ३० वर्ष में तथा अन्य प्रान्तों में जल्दी २ बन्दोबस्त होता है। नये बन्दोबस्त में प्रायः हर जगह सरकारी मालगुजारी का भार बढ़ जाता है।

रहे क्योंकि भिन्न २ प्रांतों में पृथक् २ दरों के होने से बड़ा गड़-बड़ मच जायगा। पुनः यदि किसी बड़ी कोठी की शाखायें भिन्न २ प्रांतों में हों और मुख्य कार्य्यालय किसी बड़े नगर में हो तो यह ज़रूरी नहीं है कि जिस प्रांत से उस कोठी पर आय-कर लगेगा, उसी प्रांत से उसे आमदनी मिलती हो।

सारांश यह है कि ज़मीन की आमदनी, आबपाशी, आब-कारी, अदालती स्टाम्प की आमदनी प्रांतीय आय हो। स्टाम्प से होने वाली साधारण (व्यापारिक आदि) आमदनी तथा इनकम टैक्स आदि की आमदनी भारत सरकार की आय रहे। ऐसी कोई मद्द न रहे जिस में भारत सरकार और किसी प्रांतीय सरकार, दोनों का भाग हो।

भारत सरकार के घाटे की पूर्ति—आय के सब साधन पृथक् पृथक् हो जाने पर भारत सरकार के आय व्यय के अनुमान में आमदनी की कमी होना स्वाभाविक था। इसकी पूर्ति के लिये यह तजवीज़ की गयी कि प्रान्तीय सरकार भारत सरकार को भिन्न २ मद्दों का भाग देने के बदले अपनी बढ़ती हुई कुल आय में से एक निर्धारित हिस्सा दें।

सब भाग-युक्त विषय उठा देने पर सन् १९१७—१८ ई० में सब प्रांतों की आमदनी का अनुमान लगा कर तथा उसमें से उनका खर्च तथा अकाल सम्बन्धी व्यय निकाल कर देखा गया तो मालूम हुआ कि उस वर्ष सब प्रांतों

को बचत की रक़म १५६४ लाख रुपये थी और भारत सरकार के चिट्ठे में १३६३ लाख रुपये की कमी होती थी। इस आधार पर यह प्रस्ताव किया गया कि प्रान्तों की बचत में से ८७फ़ी सदी रुपया भारत सरकार को दे दिया जावे, आगे इस अनुपात में आवश्यकतानुसार परिवर्तन होता रहे।

मेस्टन कमेटी—पार्लियामेण्ट ने इस विषय की नीति ठहराने में परामर्श देने के लिये एक कमेटी नियुक्त की जो अपने सभापति के नाम से मेस्टन कमेटी कहलायी। इस कमेटी ने साधारण स्टाम्प से होने वाली आय प्रान्तीय सरकारों के लिये रखी जाने की सिफारिश की और अन्य बातें सुधार स्कीम के अनुसार रहने दीं। इस प्रकार हिसाब लगाने से मालूम हुआ कि भारत सरकार को सन् १९२१—२२ ई० में दस करोड़ रुपये का घाटा रहता है। प्रान्तों की आय में कुल १८—५ करोड़ की वृद्धि का अनुमान हुआ। इस वृद्धि में भिन्न भिन्न प्रान्तों का जो हिस्सा रहा, उसके आधार पर उस उस प्रान्त की ओर से भारत सरकार को दी जाने वाली रक़म का परिमाण निश्चय किया गया। अवनत प्रान्तों के साथ कुछ रियायत की गई। इस प्रकार यह निश्चय हुआ कि सन् १९२१—२२ ई० में भिन्न २ प्रान्त भारत सरकार को निम्नलिखित रक़म प्रदान करें।

मद्रास	३४८	लाख	रुपये
बम्बई	५६	”	”
बङ्गाल	६३	”	”
संयुक्त प्रान्त	२४०	”	”
पञ्जाब	१७५	”	”
बर्मा	६४	”	”
बिहार उड़ीसा	...	”	”
मध्यप्रान्त और बरार	२२	”	”
आसाम	१५	”	”
योग	९८३	लाख	रुपये

यह रक़म प्रान्तों की उस वर्ष की आर्थिक स्थिति के अनुकूल थी और ऐसी नहीं थी जो प्रतिवर्ष के लिये ठहराना उचित होता इस लिये कमेटी ने ऐसी रक़म का हिसाब लगाया जो अन्ततः भिन्न भिन्न प्रान्तों के लिये स्थायी रूपसे ठहरा दी जाय। उसके विचार से ऐसी रक़म देने के लिये प्रांतों की स्थिति प्रथम वर्ष से छः वर्ष के समय में, छः वार्षिक मञ्जिलों के पश्चात्, अनुकूल होगी। अस्तु, सन् १९२१—२२ ई० और इस वर्ष के बाद प्रत्येक प्रान्त से भारत सरकार को दी जाने वाली रक़म का फ़ी सैकड़े हिसाब इस प्रकार नियत किया गया है—

प्रान्त	१९२१-२२	१९२२-२३	१९२३-२४	१९२४-२५	१९२५-२६	१९२६-२७	१९२७—२८ और उसके बाद
मदरास	३५॥	३२॥	२९॥	२६॥	२३	२०	१७
बम्बई	५॥	७	८	९॥	१०॥	१२	१३
बङ्गाल	६॥	८॥	१०॥	१२॥	१५	१७	१९
संयुक्तप्रान्त	२४॥	२३॥	२२॥	२१	२०	१९	१८
पञ्जाब	१८	१६॥	१५	१३॥	१२	१०॥	९
बर्मा	६॥	६॥	६॥	६॥	६॥	६॥	६॥
बिहार उडीसा	०	१॥	३	५	७	८॥	१०
मध्य प्रान्त और बरार	२	२॥	३	३॥	४	४॥	५
आसाम	१॥	१॥	२	२	२	२	२॥
योग	१००	१००	१००	१००	१००	१००	१००

मेस्टन कमेटी का निश्चय नियम में समाविष्ट हो गया है। कौन्सिल युक्त गवर्नर जनरल चाहें तो किसी वर्ष प्रान्तों से ९८३ लाख रुपये से कम रक़म ले सकते हैं। विशेष आवश्यकता होने पर भारत मन्त्री की स्वीकृत के उपरान्त प्रान्तों से अधिक रक़म ली जा सकती है।

प्रान्तों को कर लगाने का अधिकार—सुधार ऐक्ट से प्रान्तीय व्यवस्थापक परिषदों को यह अधिकार है कि गवर्नर जनरल की पूर्व स्वीकृति बिना प्रान्तीय सरकार के लिये निम्न-लिखित प्रकार के कर लगाने का कानून वना सकें—

(१) ऐसी ज़मीन पर, जो खेती के अतिरिक्त अन्य किसी काम में आती हो।

(२) वारिस पर, अथवा संयुक्त परिवार के किसी अधिकारी पर।

(३) कानून से अनुमोदित किसी जुए पर।

(४) विज्ञापनों पर।

(५) मनोरञ्जन (खेल तमाशों) पर।

(६) रजिस्टरी की फीस।

(७) किसी खास विलास-सामग्री पर।

(८) स्टाम्प का ऐसा कर जो भारतीय व्यवस्थापक सभा ने न लगाया हो।

ऋण लेने का अधिकार—प्रान्तीय सरकारों को अब ऋण लेने का अधिकार है। उन्हें ऋण लेना तो भारत सरकार के ही द्वारा पड़ता है, परन्तु भारत सरकार से ऋण की दर, समय और पद्धति स्वीकार हो जाने पर अब वे बाज़ार में निम्नलिखित हालतों में ऋण ले सकती हैं--

(१) यदि भारत सरकार प्रान्तीय सरकार को आवश्यक रुपया एक साल में ऋण न दे सके।

(२) यदि प्रान्तीय सरकार भारत सरकार को यह संतोष दिला दे कि किसी विशेष कार्य के लिये उसे भारत सरकार की अपेक्षा अधिक और सहज में रुपया उधार मिल सकता है।

प्रान्तीय सरकार ऋण का रुपया केवल निम्नलिखित कार्यों में ही व्यय कर सकती हैं--

(१) अकाल सम्बन्धी कार्यों में,

(२) प्रान्तीय ऋण का हिसाब ठीक करने में, और

(३) ऐसे बड़े कार्यों के लिये, जिनसे स्थायी रूप से अच्छी आमदनी हो।

अकाल निवारण—यह कार्य पहले भारत सरकार पर था, अब प्रान्तीय सरकारों पर रखा गया है। सुधार-स्कीम में यह प्रस्ताव था कि प्रत्येक प्रान्त में इससे पहले जिस तरह के अकाल पड़े हों, उनके औसत-हिसाब से आगे के लिये प्रति वर्ष कुछ रक़म अलग निकाल कर रख देनी चाहिये। अब भिन्न २ प्रान्तों को अकाल निवारणार्थ इस हिसाब से रक़में रखनी होती हैं—

प्रान्त	रुपये	प्रान्त	रुपये
मद्रास	६,६१,०००	बिहार उडीसा	११,६२,०००
बम्बई	६३,६०,०००	बर्मा	६७,०००
बङ्गाल	२,००,०००	मध्यप्रांत और बरार	४७,२६,०००
संयुक्तप्रान्त	३६,६०,०००	आसाम	१०,०००
पञ्जाब	३,८१,०००		

यह रक़में उस मरम्मत या इमारत के काम में लगानी होती हैं, जिनसे अकाल से रक्षा हो या दुर्भिक्ष, पीड़ित आदमियों की सहायता हो। यदि इन कामों की आवश्यकता न हो तो यह रक़म इसी मद्द के लिये भारत सरकार के पास जमा कराई जाती है, जो इस पर सूद देती है। आवश्यकता होने पर प्रान्तीय सरकारों को इस फण्ड में उक्त कामों के लिये, अथवा किसानों को ऋण देने के लिये रुपया मिल सकता है।

भारतीय व्यवस्थापक विभाग—भारतीय 'राजस्व सम्बन्धी सुधारों के विवेचन में यह भी जान लेना आवश्यक है कि भारतीय और प्रान्तीय व्यवस्थापक विभागों का संगठन किस प्रकार है। इस विषय का सविस्तर वर्णन हमारी भारतीय शासन में किया गया है। संक्षेप में यह कहना पर्याप्त होगा कि

गवर्नर जनरल के अतिरिक्त, भारतीय व्यवस्थापक विभाग के दो भाग हैं—

(१) राज्य-परिषद्, अर्थात् कौंसिल-आफ-स्टेट।

(२) व्यवस्थापक सभा, अर्थात् लेजिस्लेटिव ऐसेम्बली।

राज्य-परिषद् में ६० सदस्य होते हैं, जिनमें से ३३ निर्वाचित और २७ नामज़द होते हैं। व्यवस्थापक सभा में सदस्यों की संख्या १४० निश्चित की गई है, जिनमें से ४० नामज़द हो। इस समय इस सभा में १०३ निर्वाचित और ४१ नामज़द, कुल १४४ सदस्य हैं। सिवाय कुछ ख़ास हालतों के, कोई कानून अब पास हुआ नहीं समझा जाता, जब तक दोनों सभायें उसे मूल रूप में अथवा कुछ संशोधनों सहित स्वीकार न करलें।

प्रान्तीय वस्थापक परिषदें—अब प्रत्येक बड़े प्रान्त में एक एक व्यवस्थापक परिषद् है। किसी परिषद् में २० फ़ी सदी से अधिक सरकारी सदस्य नहीं, और ७० फ़ी सदी से कम निर्वाचित नहीं है। वर्तमान संगठन इस प्रकार है—

सदस्य	मद्रास	बम्बई	बङ्गाल	संयुक्तप्रान्त	पञ्जाब	बिहार, उड़ीसा	मध्यप्रान्त बरार	आसाम
निर्वाचित	९८	८६	११३	१००	७१	७६	३७	२९
नामज़द	२९	२५	२६	२३	२२	२७	३३	१४
योग	१२७	१११	१३९	१२३	९३	१०३	७०	५३

केन्द्रीय विषय—देश की समुचित उन्नति के लिये यह आवश्यक है कि केन्द्रीय सरकार यथा सम्भव कम विषय अपने अधीन रख कर शेष सब के संचालन का अधिकार निम्नस्थ संस्थाओं के दे दे। केन्द्रीय सरकार विशेषतया नीति निर्धारित करे और प्रान्तीय या स्थानीय संस्थाओं को विविध कार्यों में आर्थिक सहायता देकर उनका केवल निरीक्षण करती रहे। परन्तु भारतवर्ष में सरकार ने अधिकारों को बहुत ही केन्द्रीभूत कर रखा है।

सुधार ऐक्ट से थोड़े से विषय प्रान्तीय कर दिये गये हैं, फिर भी केन्द्रीय सरकार के अधीन बहुत हैं। कुछ मुख्य मुख्य केन्द्रीय विषय निम्नलिखित हैं—

१—सम्राट् की भारतवर्ष सम्बन्धी सामुद्रिक, सैनिक तथा हवाई शक्ति, भारतीय सामुद्रिक बेड़ा, और वालंटियर।

२—विदेशों, तथा देसी रियासतों से सम्बन्ध।

३—ब्रिटिश भारत के, आठ बड़े प्रान्तों को छोड़ कर, अन्य भाग।

४—आमदोरफ़्त, रेल, सैनिक पुल, और आन्तरिक जल मार्ग।

५—जहाज, और समुद्र में रोशनी के मीनार।

६—बन्दरगाह, छूत के रोग के समय समुद्र तट पर जाने की आज्ञा, और सैनिक अस्पताल।

७—डाक, तार और टेलीफ़ोन।

८—भारतीय आय, जिसमें आयात निर्यात कर, आय कर, नमक आदि की मद्दें सम्मिलित हैं।

६—सिक्का तथा नोट।

१०—भारत का सार्वजनिक ऋण।

११—सेविङ्ग बैङ्क।

१२—दीवानी और फौजदारी कानून।

१३—व्यापार तथा बैङ्क का काम, और व्यापारिक कम्पनियां या समितियां।

१४—अफ़ीम आदि पदार्थों की पैदावार तथा खपत का नियन्त्रण।

१५—मिट्टी का तेल और स्फोटक पदार्थों का नियन्त्रण।

१६—भूमि की माप।

१७—अधिकांश खनिज-उन्नति का काम।

१८—आविष्कार और डिज़ाइन (नक़शे)।

१६—कापी राइट (किताब छापने का पूरा अधिकार) देना।

२०—विदेशों को जाने, या वहां से आने की इजाज़त देना।

२१—केन्द्रस्थ पुलिस संगठन, रेलवे पुलिस, तथा हथियार।

२२—वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अन्वेशन और निरीक्षण-शाला।

२३—ईसाई धर्म की व्यवस्था।

२४—प्राचीन विषयों की शिक्षा।

२५—पशु विद्या।

२६—उल्का (टूटते तारों) सम्बन्धी विज्ञान।

२७—मनुष्य गणना और लेखा।

२८—अखिल भारतवर्षीय नौकरियां।

२९-कुछ प्रान्तीय विषयों की व्यवस्था।

३०-जो विषय प्रान्तीय नहीं हैं।

प्रान्तीय विषय—सुधारों से प्रान्तीय विषय दो भागों में विभक्त हैं, रक्षित और हस्तान्तरित। रक्षित विषय गवर्नर की प्रबन्ध कारिणी सभा के सदस्यों के अधिकार में रहते हैं। हस्तान्तरित विषय मन्त्रियों के अधिकार में होते हैं। मन्त्री प्रायः व्यवस्थापक परिषदों के चुने हुये सदस्यों में से गवर्नर द्वारा नियुक्त किये जाते हैं।

रक्षित विषय—भिन्न २ प्रान्तों में कुछ अन्तर होते हुये भी साधारणतया निम्नलिखित विषय रक्षित हैं—

१-आबपाशी तालाब और नहर।

२-ज़मीन की मालगुज़ारी।

३-अकाल निवारण।

४-न्याय विभाग और स्टाम्प।

५-प्रान्तीय कानूनी रिपोर्टें।

६-उन खनिज सम्पत्तियों की उन्नति जिनपर सरकार का अधिकार है।

७-औद्योगिक विषय जिनमें कारखाने, मज़दूरी सम्बन्धी बाद विवाद, विजली, वोयलर्स, गैस, धूंये का कष्ट, और मज़दूरों की कुशल सम्मिलित है।

८-छोटे प्रान्तीय बन्दरगाह।

९-अन्दरूनी पानी के काम, नाले आदि।

१०-रेलवे पुलिस को छोड़कर अन्य पुलिस।

११-समाचार पत्रों और छापेखानों का नियन्त्रण।

१२-जरायम पेशा जातियां।

१३-क़ैदखाने और सुधार-शालायें।

१४-सरकारी छापाखाना।

१५-भारतीय तथा प्रान्तीय व्यवस्थापक सभाओं के लिये मत देने, और निर्वाचन होने की व्यवस्था।

१६—औषधी तथा अन्य पेशों की योग्यता।

१७—भारतीय या अन्य सार्वजनिक नौकरियां, जो प्रान्त के भीतर हों।

१८—नये प्रान्तीय टैक्स।

१९—रुपया उधार लेना।

२०—किसी प्रान्तीय विषय सम्बन्धी कोई प्रान्त का कानून प्रचलित कराने के लिये जुर्माना, दण्ड या क़ैद की सज़ा।

२१—विविध, (अ) जुए सम्बन्धी नियम, पशुओं पर निर्दयता रोकना, (इ) जङ्गली पशुओं की रक्षा, (ई) विषैले पदार्थों का

नियन्त्रण, (उ) मोटर सवारियों का नियन्त्रण, (ऊ) नाटक गृह और सिनेमेटोग्राफ़ों का नियन्त्रण।

हस्तान्तरित विषय—निम्नलिखित विषय प्रायः हस्तान्तरित हैं—

१—स्थानीय स्वराज्य।

२—औषध प्रबन्ध और सार्वजनिक स्वास्थ।

३—कुछ अपवादों को छोड़ कर, शिक्षा।

४—सार्वजनिक कार्य, (अ) सार्वजनिक इमारतें, (आ) सैनिक महत्व वाली छोड़कर, अन्य सड़कें, पुल और घाट, (इ) ट्रामवे जो प्रान्तीय व्यवस्था के अधीन हों, (ई) लाइट और फीडर (छोटी) रेलवे।

५—खेती और अफ़ीम।

६—सहयोग समितियां।

७—जन्म, मृत्यु और शादियों की गणना।

८—सिविल जीव चिकित्सा विभाग।

९—जङ्गल, और उनमें शिकार की रक्षा।

१०—दस्तावेजों की रजिस्टरी।

११—धार्मिक व दान वाली संस्थायें।

१२—उद्योग धन्धों की उन्नति जिसमें औद्योगिक अन्वेशन, तथा शिक्षा सम्मिलित हैं।

१४—खाद्य तथा अन्य पदार्थों में मिलावट।

१३—तोल तथा माप।

१५—अजायबघर और चिड़ियाघर।

भारतीय बजट के नियम—भारत सरकार का अनुमानित आय व्यय का विवरण, प्रतिवर्ष भारतीय व्यवस्थापक सभा और राज्य-परिषद्, इन दोनों सभाओं के सामने रखा जाता है। गवर्नरजनरल की सिफारिश बिना किसी काममें रुपया लगाने का प्रस्ताव नहीं किया जा सकता। निम्न लिखित विभागों में रुपया लगाने के विषय में कौंसिल-युक्त गवर्नर जनरल के प्रस्ताव व्यवस्थापक सभा के वोट (मत) के लिये नहीं रखे जाते, न सालाना विवरण के समय कोई सभा उन पर वाद विवाद कर सकती है, जब तक गवर्नर जनरल इसके लिये आज्ञा न देदें:—

(१) ऋण का सूद।

(२) ऐसा ख़र्च जिसकी रक़म क़ानून से निर्धारित हो।

(३) उन लोगों की पेंशन या तनख़्वाहें, जो सम्राट् या भारत-मंत्री द्वारा या सम्राट् की स्वीकृति से नियुक्त किये गए हों।

(४) चीफ़ कमिश्नरों या जुडिशल कमिश्नरों का वेतन।

(५) वह ख़र्च, जिसे कौंसिल-युक्त गवर्नर जनरल ने (अ) धार्मिक, (आ) राजनैतिक, या (इ) रक्षा अर्थात् सेना सम्बन्धी ठहराया हो।

इनको छोड़कर बजट के अन्य विषयों के ख़र्च के लिये कौंसिल-युक्त गवर्नर जनरल के अन्य प्रस्ताव व्यवस्थापक सभा के वोट (मत) के वास्ते, माँग के स्वरूप में रखे जाते हैं। सभा को अधिकार है कि वह किसी माँग को स्वीकार करे या न करे, अथवा घटाकर स्वीकार करे, परन्तु कौंसिल-युक्त गवर्नर जनरल सभा के निश्चय को रद्द कर सकता है। विशेष दशाओं में गवर्नर जनरल ऐसे ख़र्च के लिये स्वीकृति दे सकता है जो उसकी सम्मति में देश की रक्षा या शांति के लिये आवश्यक हो।

बजट राष्ट्र-परिषद् में भी पेश होता, पर उसे घटाने या किसी माँग को अस्वीकार करने आदि का अधिकार केवल भारतीय व्यवस्थापक सभा को ही है। राज्य-परिषद् अपने प्रस्ताव आदि से सरकार की आर्थिक नीति या साधनों की आलोचना कर सकती है, बजट में किसी टैक्स के प्रस्ताव को संशोधित, या उसे रद्द कर सकती है। व्यवस्थापक सभा से टैक्स के प्रस्ताव बाक़ायदा बिल के रूप में आते हैं, उनका दोनों सभाओं से पास होना ज़रूरी है। यद्यपि राज्य-परिषद् रुपए सम्बन्धी किसी बिल को प्रारम्भ नहीं कर सकती, परंतु उसके वाद-विवाद और निपटारे में भाग ले सकती है।

प्रांतीय बजट के नियम—प्रान्तीय बजट को प्रांतीय सरकार, कार्य कारिणी के सदस्य और मंत्री मिल कर बनाते हैं। प्रान्तीय आय में से सब से प्रथम भारत-सरकार का हिस्सा देना होता है, उसके बाद रक्षित विषयों का अधिकार होता है। शेष

आय हस्तांतरित विषयों के लिये रहती है, इसे मंत्री भिन्न भिन्न मद्दों के लिये विभक्त करते हैं। अगर आय काफ़ी न हो, तो नये टैक्सों से उसकी पूर्ति की जाती है, इसका निश्चय गवर्नर और मंत्री करते हैं। अगर नया टैक्स ऐसा लगाना हो, जो प्रान्तीय सरकारों के अधिकार में न हो तो भारत-सरकार की अनुमति ली जाती है।

बजट एक नक्शे की शक्ल में, प्रति वर्ष परिषद् के सन्मुख उपस्थित किया जाता है, और आय को ख़र्च करने के लिये प्रांतीय सरकार के प्रस्तावों पर (माँग के स्वरूप में) परिषद् का मत लिया जाता है। परिषद् किसी माँग को स्वीकार कर सकती है, या उसे पूर्णतया अथवा उसके किसी अंश को अस्वीकार कर सकती है। इस विषय में इन नियमों पर ध्यान दिया जाता है—

(१) व्यय की निम्नलिखित मद्दों के प्रस्तावों पर परिषद् के वोट नहीं लिये जाते—

(क) जो रक़म प्रांतीय सरकार की ओर से कौंसिल-युक्त गवर्नर जनरल को देनी होती है, (यह निश्चित की हुई है।)

(ख) ऋण और उस पर व्याज।

(ग) जो ख़र्च किसी क़ानून से निश्चित हो चुका है।

(घ) उन लोगों का वेतन जो सम्राट द्वारा या उनकी पसंद से अथवा कौंसिल-युक्त भारत-मंत्री द्वारा नियुक्त किए गये हों।

(ङ) प्रांत के हाईकोर्ट के जजों तथा एडवोकेट जनरल का वेतन।

(२) अगर कोई माँग रक्षित विषय सम्बन्धी हो और गवर्नर यह निर्णय कर दे कि उस विषय सम्बंधी उत्तरदायित्व को पूर्ण करने के लिये उसकी आवश्यकता है तो प्रांतीय सरकार, परिषद् के फैसले को रद्द कर सकती है।

आवश्यकता के समय गवर्नर ऐसे खर्च के किये जाने का अधिकार दे सकता है जो उसकी सम्मति में प्रांत की शांति या सुरक्षा के लिये अथवा किसी विभाग के संचालन के लिये ज़रूरी हो। जब तक कि गवर्नर परिषद को इस बात की सिफारिश न करे, कोई रकम किसी कार्य के लिये व्यय करने का प्रस्ताव नहीं होता।

सुधार और कौंसिल-युक्त भारत मंत्री—सुधारों से भारत मंत्री और भारत सरकार के पारस्परिक सम्बन्ध में नियमानुसार कोई परिवर्तन नहीं किया गया। हां, यह समझौता रखा गया है कि भारत मंत्री इस बात का विचार रखे कि जिन विषयों में भारत सरकार और भारतीय व्यवस्थापक सभायें सहमत हों उनमें वह बहुत कम, और विशेष दशाओं में

ही हस्तक्षेप करे। यथा सम्भव हस्तक्षेप ऐसे विषय में हो जिससे साम्राज्य की अन्तर्राष्ट्रीय कर्तव्यता की रक्षा हो, या जो ब्रिटिश सरकार के आर्थिक प्रबन्ध सम्बन्धी हो।

प्रान्तों के हस्तान्तरित विषयों में भारत मंत्री को हस्तक्षेप करने का अवसर अब कम है। रक्षित विषयों के नियंत्रण के सम्बन्ध में अन्तिम अधिकार पार्लियामेण्ट या भारत मंत्री को ही है, तथापि भारत सरकार को इस विषय में पहिले की अपेक्षा अधिक अधिकार होगये हैं।

सुधार ऐक्ट से यह निश्चय हुआ है कि सम्राट् के अन्य मंत्रियों की भांति भारत मंत्री का भी वेतन ब्रिटिश कोष से ही दिया जाय और पार्लियामेण्ट प्रति वर्ष उस पर वोट दे।

हाई कमिश्नर—सुधार ऐक्ट के अनुसार भारतवर्ष के लिये इंग्लैंड में हाई कमिश्नर की नियुक्ति होती है। इस पदाधिकारी को उन विषयों में से कुछ सौंपे जाते हैं जो पहिले भारत मंत्री के अधीन थे, जैसे सरकार के लिये किसी माल का ठेका देना, विदेशों में स्टोर, रेलवे का सामान आदि खरीदना। औपनिवेशिक सरकारें स्वयं अपना अपना हाई कमिश्नर नियुक्त करती हैं, परन्तु भारत के लिये हाईकमिश्नर की नियुक्ति भारत सरकार द्वारा न होकर ब्रिटिश सरकार द्वारा ही हुई है।

भावी सुधार कमीशन—सुधार ऐक्ट में ऐसी व्यवस्था की गयी है कि इसके पास होने के दस वर्ष बाद एक कमीशन

नियुक्त किया जायगा जो ब्रिटिश भारतवर्ष की राज्य पद्धति, शिक्षा की वृद्धि और प्रतिनिधिक संस्थाओं के विकास तथा इसके सम्बन्ध में अन्य विषयों की जांच करेगा, और इस बात की रिपोर्ट करेगा कि उत्तरदायी शासन के सिद्धान्त को स्थिर करना कहां तक उचित है तथा उस समय जो उत्तरदायी शासन प्रचलित हो, उसे कहां तक बढ़ाना, बदलना, या घटाना ठीक होगा।

सिलेक्ट कमेटी—भारतीय विषयों पर विचार करने के लिये हाउस आफ कोमन्स की एक विशिष्ट समिति (सिलेक्ट कमेटी) प्रति वर्ष के आरम्भ में नियुक्त होती है। वह पार्लियामेण्ट में भारतीय आय व्यय के वार्षिक वाद विवाद से पहले अपनी रिपोर्ट देती है, जिससे पार्लियामेण्ट को यहां के सम्बन्ध में विचार करने का विशेष अवसर मिले।

सुधारों की आलोचना—राजस्व व्यवस्था सम्बन्धी सुधारों का वर्णन हो चुका। अब इन की कुछ आलोचना करते हैं।* विदित हो कि प्रान्तीय सरकार में आय पर मंत्रियों को केवल हस्तान्तरित विषयों के सम्बन्ध में कुछ अधिकार दिया गया है। यह बहुत थोड़ा है। परन्तु भारत सरकार में प्रजा को कोई ऐसा भी अधिकार प्राप्त नहीं है। उसके प्रबन्ध कर्त्ता

* इस विषय में 'मर्यादा' में प्रकाशित श्री० एन. एम. मजुमदार महाशय के लेख से सहायता ली गयी है।—लेखक

नामज़द होते हैं, और देश की आय पर पूरा स्वत्व रखते हैं, वे प्रजा द्वारा कभी पृथक् नहीं किये जा सकते। ऐसे प्रबन्ध का कारण यह बताया गया है कि भारत सरकार को भारत मंत्री तथा पार्लियामेण्ट के प्रति अपना उत्तरदायित्व स्थिर रखना चाहिये।

भारत सरकार का भारत मंत्री के प्रति उत्तरदायित्व- अब यह विचारणीय है कि जिस राज्य प्रणाली में पार्लियामेण्ट की प्रभुता पूर्ण रूप से है, वहां साम्राज्य का कोई भी भाग सम्राट् के किसी सेवक के प्रति उत्तरदायी नहीं होता। भारत मंत्री सम्राट् का एक कार्यकर्ता मात्र हैं। उसके प्रति भारतीय उत्तरदायित्व का प्रश्न उपस्थित करना मानों पार्लियामेण्ट की समकक्षा की एक दूसरी शक्ति खड़ा करना है। यह बात विलकुल नियम विरुद्ध है।

पार्लियामेण्ट के प्रति उत्तरदायित्व—सिद्धान्त से पार्लियामेण्ट, भारतीय विषयों पर भारत मंत्री द्वारा पूर्ण नियंत्रण करती है, परन्तु वास्तव में पार्लियामेण्ट का कार्य भार इतना बढ़ा हुआ है, और उसे इंगलैंड से घनिष्ठ सम्बन्ध रखने वाले विभागों की इतनी चिन्ता रहती है कि वह भारतीय विषयों पर बहुत ही कम ध्यान दे सकती है। सुधारों से अब भारत मंत्री का वेतन ब्रिटिश कोष से मिलता है, अतः ब्रिटिश सरकार के आय व्यय सम्बन्धी बाद विवाद में भारतीय विषयों

की चर्चा कुछ अधिक होने की सम्भावना है, परन्तु वह पर्याप्त नहीं। पार्लियामेण्ट में ऐसे सदस्य बहुत कम होते हैं जिन्हें भारतीय विषयों का यथेष्ट ज्ञान हो; जो होते हैं, उनमें से कुछ थोड़े से प्रशंसनीय अपवादों को छोड़ कर, अधिकांश में, भारतीय हित की दृष्टि से विचार नहीं करते, अपने देश के स्वार्थ-साधन में लगे रहते हैं। सुधारों से, प्रति वर्ष भारतीय विषयों पर विचार करनेके लिये पार्लियामेण्टकी एक सिलेक् कमेटी बनाई जाने की व्यवस्था की गयी है। परन्तु जब तक इस कमेटी में, एवं हाउस-आफ-कामन्स में, भारतवर्ष अपने यथेष्ट प्रतिनिधि नहीं भेजता, तब तक पार्लियामेंटका भारतीय विषयोंपर कुछवास्तविक नियंत्रण नहीं हो सकता। इसका परिणाम यह होता है कि भारत सरकार, विशेषकर आय सम्बन्धी विषयों में प्रजा-प्रतिनिधियों से अनियंत्रित रहकर पार्लियामेंट के निरीक्षण में भी नहीं रहती। जब प्रजा प्रतिनिधियों का कोष पर अधिकार नहीं, तो उनका साधारण कार्यों पर भी नियंत्रण नहीं रह सकता। यह व्यवस्था शीघ्र बदल जानी चाहिये और भारतीय कोष पर भारतीय व्यवस्थापक सभा को पूर्ण अधिकार होना चाहिये, साथ ही व्यवस्थापक सभा में प्रजा-प्रतिनिधियों, अर्थात् निर्वाचित सदस्यों की प्रधानता रहनी चाहिये।

प्रान्तों का विचार—यह तो हुई भारत सरकार की बात, अब प्रान्तों का विचार कीजिये। पहले कहा जा चुका है

कि प्रान्तीय सरकारों में प्रजा के प्रतिनिधियों को आय पर जो नियन्त्रण-अधिकार है, वह बहुत कम है।

प्रबन्धकारिणी परिषद् के सदस्यों तथा मन्त्रियों में भेद भाव रखा गया है और शासन कार्य दो भागों में विभक्त किया गया है। रक्षित विषयों का, आय पर प्रधान अधिकार है; व्यवस्थापक परिषद् उन पर होने वाले व्यय में कुछ हस्तक्षेप नहीं कर सकती, क्योंकि गवर्नर इस बात का निर्णय पत्र दे सकता है कि इस प्रकार धन व्यय करना आवश्यक है। मन्त्री या तो अपनी स्थिति से संतुष्ट रहें, अथवा अधिक धन प्राप्त करने के लिये कर लगाने का अप्रिय कार्य करें। यद्यपि मन्त्रियों के कहने का कुछ प्रभाव नहीं है, तथापि मंत्री रक्षित विषयों पर किये हुए व्यय के लिये भी उत्तरदायी रहते हैं। मन्त्रियों और प्रबन्ध-कारिणी परिषद् में जो मत भेद होता है, उसका निर्णय गवर्नर के हाथ रहता है। मन्त्री या तो निरन्तर प्रबन्धकारिणी परिषद् से वाद विवाद करें अथवा वे भी सरकारी कर्मचारियों की हां में हां मिलाते रहें। ऐसी व्यवस्था में वे अपना कर्त्तव्य पालन कर ही कैसे सकते हैं?

राजनैतिक शिक्षा की यह पद्धति अच्छी नहीं— इस प्रकार जब दस वर्ष के अनन्तर कमीशन द्वारा भारतवासियों की शासन-विषयक योग्यता की परीक्षा होगी तो सम्भवतः उसका यही निर्णय होगा कि भारतवासी उत्तर-

दायी शासन के मार्ग पर आगे बढ़ने के योग्य नहीं हैं, उन्हें कुछ समय और प्रतीक्षा करनी चाहिये। इस प्रकार कदाचित् पहिला ही पाठ फिर पढ़ाया जावे।

सुधार योजना के रचयिताओं ने योजना का अभिप्रायः आनुक्रमिक पाठों द्वारा जनता को राजनैतिक शिक्षा देना बताया था, परन्तु जब प्रजा-प्रतिनिधियों को आर्थिक स्वतन्त्रता नहीं दी गयी तो यह उद्देश्य सिद्ध ही नहीं हो सकता।

प्रबन्धकर्त्ता, व्यवस्थापक परिषदों के प्रति उत्तरदायी होने चाहिये—सुधारयोजना के रचयिताओं ने कहा है कि 'यदि प्रतिनिधियों को इस बात की शक्ति दे दी जाय कि वह शासन के लिए आवश्यक धन देना अंगीकार करें या ना करें, तो सरकार की शक्ति जड़ीभूत हो जायगी।' इस वाक्य से उनका भारतीय जनता में घोर अविश्वास प्रकट होता है। पुनः यदि यही मान लिया जाय कि प्रबन्ध कारिणी परिषदों को अपनी आवश्यकतानुसार धन एकत्र करने और इच्छानुसार व्यय करने की क्षमता होनी चाहिये तो प्रश्न यह है, कि वह किस के प्रति उत्तरदायी रहें। उनका भारतमन्त्री और पार्लियामेंट के प्रति उत्तरदायी रहना तो वैसा ही अनुचित् है, जैसा भारत-सरकार का। इस लिये उन्हें व्यवस्थापक परिषदों के प्रति उत्तरदायी रहना चाहिये और व्यवस्थापक परिषदों के सदस्य सब निर्वाचित् होने चाहिये। इस प्रकार प्रान्तों के प्रबन्ध का नियन्त्रण प्रजा-प्रतिनिधियों से होना चाहिये।

जो कर-दाता सरकार के विविध कार्यों के लिए धन देते हैं, उनके प्रतिनिधियों को ही उस धन के व्यय करने के सम्बन्ध में पूरा अधिकार होना चाहिये। कर-दाताओं का यह अधिकार सब सभ्य देशों में स्वीकार किया जाता है। भारतवर्ष में भी ऐसा होना चाहिये।

केन्द्रीय व्यय

सरकारी हिसाब—विदित हो कि सरकारी हिसाब का वर्ष, एक वर्ष की १ अप्रेल से आगामी वर्ष की ३१ मार्च तक समझा जाता है। हिसाब का वर्ष आरम्भ होने से पूर्व उसके सब आय व्यय का अनुमान किया जाता है। इसे बजट या आय-व्यय-अनुमान पत्र (Budget Estimate) कहते हैं। इसे तैयार करने के समय गत वर्ष के आय व्यय के अनुमान को संशोधित कर लिया जाता है; इसे संशोधित अनुमान (Revised Estimate) कहते हैं। बजट के समय गतवर्ष का लगभग ११ महीने का असली हिसाब और शेष समय का अनुमानित हिसाब रहता है। पीछे वर्ष भर की आय व्यय के ठीक ठीक अंक मिल जाने पर हिसाब (Accounts) प्रकाशित होता है।

सरकारी आय व्यय में, व्यय का महत्व— व्यक्तिगत आय व्यय और सरकारी आय व्ययमें बड़ा अन्तर है। मनुष्य प्रायः पहिले अपनी आय को देखते हैं और उसके अनुसार खर्च निश्चय करते हैं। इसके विपरीत राज्य अपने सन्मुख पहिले यह विचार रखता है कि उसे देश में क्या क्या काम करने हैं, उनमें कितना खर्च होगा। इस खर्च के लिये वह अपनी आय-प्राप्ति के मार्ग निकालता है और विविध कर निश्चय करता है। हां, जब राज्य का खर्च बहुत अधिक बढ़ जाता है और करों के बढ़ाने से भी ठीक काम नहीं चलता, तब उसे किफ़ायत करने, और आय को लक्ष्य में रख कर खर्च करने का विचार होता है। परन्तु यह विशेष अवस्था की बात ठहरी। साधारणतया जैसा कि ऊपर कहा गया है, खर्च का हिसाब लगाकर आय निश्चिय की जाती है। इसलिये भारतीय राजस्व के वर्णन में सरकारी व्यय का विचार पहले किया जायगा, और सरकारी आय का पीछे।

भारत सरकार का व्यय—आगे भारत सरकार का तुलनात्मक व्यय दिया जाता है।

भारत सरकार का व्यय (लाख रुपयों में)

व्यय की मद्द	१९१३-१४ का हिसाब	१९२१-२२ का हिसाब	१९२२-२३ का अनुमान			१९२३-२४ का अनुमान
			व्यवस्थापक सभा से मंजूरी ली गई	व्यवस्थापक सभा से मंजूरी नहीं ली गई	योग	
१—आय प्राप्ति का व्यय	३१८	५२३	४६३	९०	५५३	५५१
२—रेल	१९२५	२४३०	५३७	२०६२	२५९९	२७६१
३—आबपाशा	११	१४	१	१०	११	१४
४—डाक और तार	३६	१६६	३२	६६	९८	५७
५—ऋण् का सूद	१९४	१६००	३२४	११९६	१५२०	१७२२
६—सिविल शासन	५१६	९४१	५१५	४५९	९७४	१०४६
७—मुद्रा, टकसाल और विनिमय	५६	१०७	१०७८	४	१०८२	११३

व्यय की मद्द	१९१३-१४ का हिसाब	१९२१-२२ का हिसाब	१९२२-२३ का अनुमान — व्यवस्थापक सभा से मंजूरी ली गई	१९२२-२३ का अनुमान — व्यवस्थापक सभा से मंजूरी नहीं ली गई	१९२२-२३ का अनुमान — योग	१९२३-२४ का अनुमान
८—सिविल निर्माण कार्य	१५६	१५४	१५६	२	१६१	१८८
९—विविध	५०३	५५६	१३२	२७४	४०६	५२[illegible]
१०—सैनिक व्यय	३१९०	७७८८	...	६७७२	६७७२	६४८१
११—सिविल व्यय और रेल में किफायत करने की रकम	...	...	...	...	...	–४००
१२—प्रान्तों को देना	६०		६३		६३	४
योग	६९७१	१४२८२	३३३४	१०९०५	१४२३९	१३०८८
बचत	...	...	...	...	...	२४
पूर्ण योग	६९७१	१४२८२	३३३४	१०९०५	१४२३९	१३११२

पिछले नक्शे से मालूम होगा—

(क) सरकार किस किस मद्द में और कितना कितना व्यय करती है।

(ख) सन् १९१३—१४ ई० (युद्ध से पहले) की अपेक्षा अन्य वर्षों में, भिन्न भिन्न मद्दों में व्यय कितना बढ़ा है। सुधारों के बाद हिसाब रखने के ढङ्ग में कुछ परिवर्तन हो गया है। तुलना ठीक करने के लिये सन् १९१३—१४ ई० के खर्च के अङ्क उस हिसाब से (किफ़ायत कमेटी की रिपोर्ट के आधार पर) लिये गये हैं, जैसे वह उस वर्ष सुधार हो जाने की दशा में होते।

(ग) सन् १९२२—२३ ई० में व्यय के अनुमान की कितनी कम रक़म (सिर्फ़ ३१ फ़ी सदी) के लिये भारतीय व्यवस्थापक सभा की मंजूरी ली गई है। सुधारों को निःस्सारता कितनी स्पष्ट है?

(घ) सन् १९२३—२४ ई० में व्यय के अनुमान जो कमी की गई है, वह कितनी कम है।

मद्दों का ब्यौरा और आलोचना—अब हम इस नक़शे में दी हुई सन् १९२२—२३ ई० के अनुमानित व्यय की मद्दों का व्यौरा देते हुये उनके व्यय की थोड़ी थोड़ी आलोचना करते हैं। आवश्यकतानुसार किफ़ायत कमेटी के मत का भी विचार किया जायगा।

स्मरण रहे कि जो व्यय ऐसी मद्दों के सम्बन्ध में है, जिनके विषय केन्द्रीय नहीं है, वरन् प्रान्तीय है, वह केवल उन छोटे प्रान्तों का है जो प्रबन्ध के लिये चीफ़ कमिश्नरों के, परन्तु वास्तव में केन्द्रीय सरकार के ही अधीन हैं। ये प्रान्त पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त, कूर्ग, अजमेर मेरवाड़ा, देहली, अंडमान निकोबार, और ब्रिटिश बलोचिस्तान हैं।

१-आय प्राप्ति का व्यय—इस मद्द में आयात निर्यात कर; मालगुज़ारी, स्टाम्प, जंगल, रजिस्टरी, अफ़ीम, नमक और देशी माल पर कर की आय वसूल करने वाले कर्मचारियों के वेतन, आदि के अतिरिक्त अफ़ीम और नमक तैयार करने का खर्च भी सम्मिलित है।

सन् १६२२-२३ई० में इस कुल मद्द का अनुमान इस प्रकार था

आयात निर्यात कर	६८,१५,०००	रु०
आय कर	४६,६८,०००	"
नमक	१,७३,२६,०००	"
अफ़ीम	१,८६,२१,०००	"
मालगुज़ारी	१५,५४,०००	"
देशी माल पर कर	२,८४,०००	"
स्टाम्प	११,८६,०००	"
जङ्गल	४८,२७,०००	"
रजिस्टरी	४८,०००	"
योग	५,५३,३२,०००	रु०

अब नमक और अफ़ीम का हिसाब लीजिये। नमक की मद्द के खर्च का ब्योरा इस प्रकार है—

सरकार द्वारा खरीदे नमक की कीमत	२४,६३,००० रु०
अन्य व्यय	१,४६,६६,००० "
योग	१,७४,२६,००० "
घटाओ—व्यवस्थापक सभाकी की हुई कमी	१, ७१, ००० "
भारत में खर्च	१,७२,५८,००० "
इङ्गलैण्ड में "	७१,००० "
समस्त योग	१ ७३,२६,००० रु०

अफ़ीम के लिये, पोस्त के डोडे, सरकार की देख भाल और नियंत्रण में परिमित स्थान में ही बोये जाते हैं। कुल अफ़ीम सरकारी एजण्टों के हाथ बेची जाती है। इस मद्द के खर्च का ब्योरा इस प्रकार है—

अफ़ीम की खरीद, काश्तकारों को दी हुई पेशगी सहित,	१,६७,५८,००० रु०
अन्य खर्च	१६,६८,००० "
घटाओ—व्यवस्थापक सभाकी की हुई कमी	२,००, ००० "
भारत में व्यय	१,८५,५६,००० "
इङ्गलैण्ड में "	६५,००० "
कुल योग	१,८६,२१००० रु०

२-रेल---इस मद्द का ब्यौरा इस प्रकार है—

सरकारी रेल		
ऋण पर सूद	१६,६६,७४,०००	रु०
कम्पनियों की लगाई पूंजी पर सूद	३,३६,४८,०००	"
रेलों के खरीदने में		
वार्षिक वृति	५,०३,६२,०००	"
क्षति पूर्ति निधि	४५,८२,०००	"
सहायता दत्त कम्पनियां	१९,८३,०००	"
विविध	२३,०४,०००	"
योग	२५,९८,५३,०००	"

३१ मार्च सन् १९२२ ई० तक सरकरी रेलो में ६४५.०७करोड़ रुपये की रक़म लगी थी। रेलों से लाभ सन् १९०९ ई० से ही होने लगा है, पहले बराबर घाटा ही रहता था। हिसाब से मालूम हुआ है कि सन् १९१५-१६ ई० तक घाटा पूरा होगया।

रेलवे कमेटी की रिपोर्ट*—रेलों के आय व्यय के सम्बन्ध में सन् ११२०-२१ ई० की रेलवे कमेटी की रिपोर्ट का मुख्य अंश यह था —

रेलवे बजट अलग तैयार किया जाय और बड़ी व्यवस्थापक सभा में पास कराया जाय। रेलवे विभाग अपनी आमदनी

---

*"श्री शारदा" मार्च १९२२, के आधार पर।

और खर्च का ज़िम्मेदार हो। रेलवे-ऋण का व्याज चुकाने पर बाक़ी बचत को स्वेच्छानुसार व्यय करने की उसे स्वाधीनता होनी चाहिये। वह चाहे उसे नया काम जारी करने के लिये लगावे, आगे के लिये रख छोड़े, अथवा उसे सुधार या उन्नति के कामों में खर्च करें। हां, सरकार उसके हिसाब की जांच निष्पक्ष व्यक्तियों द्वारा कराती रहे।

इस विषय पर फिर से विचार करने के लिये भारत सरकार ने नवम्बर सन् १९२१ ई० में एक नई कमेटी नियुक्त की, जिसने यह सिफ़ारिश की, कि अभी हाल में रेलवे बजट अलग न रखा जावे; क्योंकि उसके अलग रखने से जो क़रीब ११ करोड़ रुपयों की वार्षिक कमी होगी, उसकी पूर्ति करना भारत सरकार के लिये बहुत कठिन हो जावेगा। इस कमेटी ने एक सिफ़ारिश यह की है कि पांच वर्षों के रेलवे सुधारों का कार्य-क्रम पहले से तैयार किया जाया करे और जितनी रक़म की ज़रूरत हो, वह पाँच साल के लिये एक दम मंजूर कर दी जाया करे। इस सिफ़ारिश के अनुसार आगामी पाँच वर्षों के लिये (सन् १९२२-२३ से सन् १९२६-२७ तक) रेलवे-बोर्ड ने खर्च का अनुमान इस प्रकार किया है :-

माल के डब्बों के लिये,	४८.५	करोड़ रुपये
मुसाफिरों के डब्बों के लिये	१८.०	„ „
ऐंजिनों के लिये	३०.०	„ „
पुरानी लाइनों और पुलों को सुधारने के लिये	१०.०	„ „
लाइन दोहराने के लिये	१२.५	„ „
गोदाम और स्टेशनों के लिये	२०.०	„ „
कारखानों के लिये	१०.०	„ „
जिन लाइनों का बनना आरम्भ हो गया है, उन्हें पूरा करने के लिये	५.०	„ „
योग	१५४	करोड़ रुपये

नवीन कमेटी ने अन्ततः अगले पांच वर्षों के लिये १५० करोड़ रुपये मंजूर किए। इस हिसाब से प्रति वर्ष रेलवे सम्बन्धी कामों में ३० करोड़ रुपये ख़र्च किये जायँगे।

किफ़ायत कमेटी का मत—किफ़ायत कमेटी ने लाइनें उखाड़ने और फिर से बैठाने की फ़जूल ख़र्ची की आलोचना की है, और ऐसी लाइनों के ख़र्च की ओर विशेष रूप से ध्यान दिलाया है, जिनसे इस समय मुनाफ़ा नहीं होता। कमेटी का ख़याल है कि कितनी ही लाइनों में ज़रूरतसे ज्यादा ऐंजिन और डब्बे रखे गए हैं, उसकी सिफ़ारिश है कि बे-मुनाफ़े

की लाइनों का खर्च घटाया जाय। सब रेलों में काम चलाने का खर्च, इस हिसाब से घटाना चाहिए कि सरकार ने जितनी पूंजी लगाई है, उस पर मामूली हालत में कम से कम ५॥ फ़ीसदी मुनाफ़ा हो। रेलवे के जमा-खर्च रखने के ढंग में संशोधन किया जाय, रेलों के एजन्ट जनरल मेनेजर कहे जाया करें और वे अपनी रेलवे के इन्तज़ाम खर्च तथा आमदनी के जिम्मेदार रहें। सन् १९२२-२३ में ६८, ५६,००,००० रु० के खर्च का अनुमान किया गया था। कमेटी का प्रस्ताव है कि सन् १९२३-२४ ई० में ६४ करोड़ ही खर्च किये जांय। इस प्रकार ४॥ करोड़ की किफ़ायत की गई है। सन् १९२३-२४, ई० में ६४ करोड़ ही खर्च किये जांय। इस प्रकार ४॥ करोड़ की किफ़ायत की गई है। सन् १९२३-२४ ई० में कुल आय ९५,५७,२४,००० रु० होने का अनुमान किया गया है, इसमें ६४ करोड़ रुपये रेलवे चलाने के खर्च का निकल जाने से शेष ३१ करोड़ से अधिक वास्तविक आय रहने का अनुमान किया गया है।

३-आबपाशी-इसका ब्यौरा इस प्रकार है-

ऋण पर सूद	९,५१,००० रु०
अन्य व्यय	१,३३,००० "
आबपाशी के लिये निर्माण कार्य	३५,००० "
योग	११,१९,००० "

४-डाक और तार—इस मद्द का ब्योरा इस प्रकार है-

ऋण पर सूद	६६,००,०००रुपये
अन्य व्यय	३१,६१,०००"
———	———————
योग	९७,६१,०००"

किफ़ायत कमेटी का मत—इस मद्द में, किफ़ायत कमेटी के मतानुसार मुख्य मुख्य बचत निम्नलिखित होनी चाहिये—

कर्मचारी घटा कर	२५	लाख	रु०
डाल लेजाने के काम में	७	"	"
डाकखाने आदि बनाने और रखने में	६	"	"
सामान खरीदने में	५४	"	"
कर्मचारियों के मकान किराये और सफर खर्च में	७	"	"
कुर्सी मेज़ आदि सामान तथा आकस्मिक आवश्यकता में	१५	"	"
इंडोयोरपियन तार विभाग की छोटी छोटी बातों में	७	"	"

५-सार्वजनिक ऋण का सूद-इस मद्द का ब्यौरा इस प्रकार है—

साधारण ऋण का सूद	२८, २४, ३१, ००० रु०
घटाओ—रेल की मद्द का सूद	१४, ५६, ६१, ००० "
" सिंचाई की मद्द का सूद	६, ५१, ००० "
" डाक और तार की मद्द का सूद	६६, ००, ००० "
" प्रान्तीय सरकारों से लिया जाने वाला सूद	२, ६६, ७३, ००० "
शेष—साधारण ऋण की मद्द का सूद	६, ६२, ४६, ००० "
सेविंग बैंक और प्राविडैंट फंड आदि अन्य देनियों पर सूद	३, २३, ६३, ००० "
क्षति पूर्त्ति निधि	२, ०४, ००, ००० "
योग	१५, २०, ०१, ००० "

इस विषय का सविस्तर उल्लेख आगे स्वतंत्र परिच्छेद में किया जायगा।

सिविल शासन—इस मद्द का ब्यौरा इस प्रकार है—

शासन व्यवस्था	
गवर्नर जनरल, चीफ कमिश्नर,	
और प्रवन्ध कारिणी कौंसिलें	२०, ४६, ००० रु०
व्यवस्थापक सभायें	८, ५०, ००० "
सेक्रेटेरियट और हेड क्वार्टरों के आफिस	८०, ३१, ००० "
छोटे प्रान्तों के ज़िलों के शासक	१६, १४, ००० "
आन्तरिक विभाग	४६, ६१, ००० "
हिसाब की जांच	८१, ७६, ००० "
न्याय विभाग	१०, ०२, ००० "
जेल	४४, २३, ००० "
पुलिस	८१, २६, ००० "
बन्दरगाह	२५, ०८, ००० "
इसाई धर्म विभाग	३२, ४२, ००० "
राजनैतिक विभाग	२, ८८, ६६, ००० "
विज्ञान	१, ०८, १८, ००० "
शिक्षा	३२, ५०, ००० "
स्वास्थ और चिकित्सा	४६, ६८, ००० "
कृषि	२२, ६६, ००० "
उद्योग धन्धे	१, ४४, ००० "
हवाई जहाज़ादि	४८, ००० "
विविध विभाग	२५, ६८, ००० "
योग	६, ७४, ०६, ०००रु०

भारतवर्ष में ऊंची नौकरियां प्रायः अंगरेज़ों को ही दी जाती हैं। यहां उन्हें कितना भारी भारी वेतन दिया जाता है, इसके कुछ उदाहरण लीजिए:—

अधिकारी	वार्षिक वेतन
गवर्नर जनरल	२, ५०, ८०० रु०
गवर्नर जनरल की प्रबंध कारिणी कौंसिल के मेम्बर; प्रत्येक	८०, ००० ”
कमांडरन चीफ़	१, ००, ००० ”
चीफ़ कमिश्नर, प्रत्येक	३६, ००० ”

ऊपर सिर्फ़ वेतन के अंक दिए हैं। अलांउस के अंक देखकर ते और भी अधिक चकित होना पड़ता है। ७ जून सन् १९२३ ई० के “यंग इंडिया” के सप्लिमेंट के लेख की कुछ बातें आगे दी जाती हैं। उसमें वाइसराय के वेतनऔर अलाउंस का हिसाब इस प्रकार दिया है—

वेतन	२, ५०, ८०० रु०
व्यय प्रबन्ध सम्बन्धी (Sumptuary) अलांउस	४०, ००० रु०
कंट्रैक्ट (Contract) अलाउँस	१, ५६, ००० रु०
स्टाफ़ और ख़ानदान	४, ७१, १०० रु०
दौरे का ख़र्च	३, ६५, ००० रु०
बैंड, शरीर रक्षक (Body-guard) और व्यक्तिगत स्टाफ़ (फ़ौज की मद्द में)	४, ३६, ००० रु०
योग	१७, १८, ९०० रु०

इस प्रकार केवल वाइसराय के लिये हमें प्रति वर्ष १७ लाख रुपये से अधिक ख़र्च करना होता है। संयुक्त राज्य अमेरिका के प्रधान का वार्षिक वेतन १५,००० पौंड (अर्थात् २ लाख २५ हज़ार रुपए); प्रजातंत्री फ्रांस के प्रधान का वेतन ४००० पौंड (अर्थात् ६० हज़ार रुपये); ब्रिटिश साम्राज्य के प्रधान मंत्री का वेतन ५००० पौंड (अर्थात् ७५ हज़ार रुपए) है । इन्हें इसके अतिरिक्त रहने का मकान और मिलता है । क्या ये अधिकारी भारतवर्ष के वाइसराय से कम महत्व के, कम शक्ति शाली या कम आदरणीय है ? सम्भवतः उनकी वेतन जितनी कम है, उतनी ही योग्यता अधिक है ।

भारतवर्ष के अधिकारियों के वेतन और अलाउंस की वृद्धि भी विलक्षण रूप से होती है। किफ़ायत-कमेटी की रिपोर्ट से मालूम होता है कि केन्द्रीय प्रान्तीय सिविल शासन सम्बन्धो स्टाफ़ के कर्मचारियों की संख्या सन् १९१३-१४ से १९२३-२४ ई० तक केवल १० फ़ी सदी ही बढ़ने पर भी उनके वेतन और अलाउंस की रक़म १०१ फ़ी-सदी बढ़ गई है। सन् १९१३-१४ में, इस मद्द में, २० २०, ६८, ००० रु० ख़र्च हुए थे, सन् १९२३-२४ ई० में उसका अनुमान ४०, ७४, ६६, ००० रु० हुआ।

इन लोगों की छुट्टी के नियम भी ऐसी उदारता से बनाए गए हैं कि उनके द्वारा होने वाले काम में हर्ज न होने देने के वास्ते कम से कम ४० फ़ी-सदी आदमी अधिक रखने पड़ते हैं। इस प्रकार जो काम १०० आदमी कर सकें, उसके लिये हमें

१४० रखने पड़ते हैं। इस अंधाधुंध व्यवहार की भी कुछ सीमा है? इसका अन्त कब होगा?

किफायत कमेटी का मत—किफायत कमेटी ने इस मद्द में ५१ लाख रुपये का खर्च घटाने के लिये सिफारिश की है। इस समय इस मद्द में १६ लाख रुपये 'ऋण प्रबन्ध' के लिये है। कमेटी ने यह रक़म 'सूद' की मद्द में डालने को कहा है। इसके अतिरिक्त और किफ़ायत इन ख़ास खास बातों में की जाने की सलाह दी गई है—

क—चपरासियों की संख्या घटाई जाय।

ख—रेलवे, डाक और तार को मिलाकर एक विभाग कर दिया जाय, और व्यापार, उद्योग, राजस्व, खेती, शिक्षा, स्वास्थ तथा निर्माण का कार्य केवल दो विभागों (व्यापार और साधारण) में बांट दिया जाय और इसमें १४ लाख की बचत की जाय।

ग—आबपाशी-इन्स्पेक्टर और शिक्षा कमिश्नर न रखे जांय।

घ—केन्द्रीय समाचार कार्यालय में चार लाख की बचत की जाय।

ङ— इंडिया आफ़िस को यहां से जाने वाले खर्च की फिर से जांच की जाय और उसमें हाई कमिश्नर के दफ़्तर के काम में किफ़ायत की जाय।

कमेटी के परामर्श विशेष उपयोगी नहीं। केवल दो चार बड़े बड़े पदों को हटाने से काम नहीं चलेगा। सभी पदों का वेतन निष्पक्ष भाव से स्थिर होना चाहिये; रंग या जाति का भेद भाव नहीं रखना चाहिये। यदि अंग्रेज़ साधारण न्यायानुमोदित वेतन पर काम न करें तो स्वदेश-प्रेमी भारत-सन्तान से काम क्यों न लिया जाय?

७-मुद्रा, टकसाल और विनिमय—इस में करेंसी के दफ़्तर और टकसालों का ख़र्च शामिल है। इसके अतिरिक्त १ अप्रेल सन् १९२० ई० से, यहां हिसाब दो शिलिंग फ़ी रुपये की दर से तैयार किया जाता है, परन्तु असल में भारत सरकार को लगभग १ शिलिंग ४ पेंस फ़ी रुपये की दर से ख़र्च करना होता है। इस प्रकार इङ्गलैण्ड में ख़र्च के लिये एक पौंड के पीछे १५ रु० देने होते हैं और हिसाब में केवल १० रु० रखे जाते है। इससे जो फ़रक पड़ता है, वह विनिमय की मद्द में डाल दिया जाता है।

इस कुल मद्द का ब्यौरा इस प्रकार है—

मुद्रा	६४,३०,००० रु०
टकसाल	२१,९२,००० "
विनिमय	९,९५,५०,००० "
योग	१०,८१,७२,००० "

८-सिविल निर्माण-कार्य—इस मद्द में भारत सरकार से सम्बन्ध रखने वाले मकान तथा दफ्तर एवं समुद्रों में रोशनी घर आदि बनाने तथा उनकी मरम्मत करने का व्यय सम्मिलित है। सन् १९२२-२३ ई० में इस मद्द का कुल अनुमानित व्यय १,६१,४९,००० रु० था।

९-विविध—इसका व्यौरा इस प्रकार है—

अकाल निवारण	२७,००० रु०
पेन्शन	२,७८,०६,००० ”
स्टेशनरी और छपाई	६६,३६,००० ”
विविध	६१,१९,००० ”
योग	४,०५,६१,००० रु०

१०-सैनिक व्यय—इसका स्थूल व्यौरा इस प्रकार है-

(क) सेना काम करने वाली (Effective)	५४,२९,००,०००
” काम न करने वाली	७,४१,३३,०००
(ख) समुद्री बेड़ा	१,३३,६६,०००
(ग) सैनिक मकान आदि	४,६७,८५,०००
योग	६७,७२,१४,०००

पूर्वोक्त सैनिक व्यय के अंकों से स्पष्ट होगा कि (क) अर्थात् सेना की मदद में कुल ६१७० लाख रुपये का खर्च है। इसमें से ५०१३ लाख रुपये का खर्च भारतवर्ष में है और शेष ११५७ लाख रुपये का खर्च इंगलैंड में।

सेना के इस खर्च का कुछ और विस्तृत ब्यौरा इस प्रकार है-

भारतवर्ष में	लाख रुपये
स्थायी सेना	३०३६
शिक्षा, अस्पताल, डिपो आदि	८०४
सेना का हेडक्वार्टर आदि	१८३
हवाई फ़ौज आदि	६६
स्टाक-हिसाब	३२
विशेष कार्यकर्ता	१६६
विविध	१७५
कार्य न करने वाले	३६६
सहायक और टेरिटोरियल	११६
योग	५०१३

इङ्गलैण्ड में	(लाख रुपये)
भारतवर्ष में ब्रिटिश सेना के कार्य्य के बदले वार आफ़िस को देने के वास्ते	१.७६
भारतवर्ष में काम करने वाली ब्रिटिश सेनाओं की यात्रा के समय का वेतन, और भत्ता	२२
अफसरों के फर्लो का भत्ता	६३
अफसरों के परिवार विवाह आदि का भत्ता	७६
ब्रिटिश सेना से लिए हुए स्टोर के बदले वार आफिस को देने के वास्ते	१३
ब्रिटिश सेना को कपड़ों का अलाउंस	८
ब्रिटिश सेना की बेकारी का बीमा	१०
विनिमय सम्बन्धी	२५
स्टोर खरीदने के लिए	७१
हवाई फ़ौज आदि	३०
स्टाक-हिसाब	१४४
विविध	१०४
कार्य न करने वाले	३७१
योग	११५७

सैनिक व्यय की वृद्धि—दरिद्र भारत में सैनिक व्यय का इतना बढ जाना अत्यन्त दुखदायी है। सन् १८५६ ई० में यहां इस मद्द का खर्च १२॥ करोड़ रुपया था, सिपाही विद्रोह

के पश्चात् १४॥ करोड़ रुपये हुआ, और सन् १८८५ ई० में यह व्यय १७ करोड़ हो गया। सन १९२१-२२ में यह ७७.९ करोड़ पर पहुंचा।

सार्वजनिक ऋण का एक प्रधान कारण सैनिक व्यय की यह भयंकर वृद्धि है। इस लिये उसकी एक बड़ी मात्रा सैनिक व्यय के लिये ली हुई समझनी चाहिये, और ऋण के सूद का एक बड़ा भाग सैनिक व्यय में ही जोड़ना चाहिये। पुनः सीमा प्रांत की रेलें भी सैनिक आवश्यकताओं के कारण ही बनाई जाती हैं; और उन में जो घाटा रहता है, वह भी सैनिक व्यय में सम्मिलित होना चाहिये। इस प्रकार यह सब हिसाब जोड़ कर "यंग इंडियाके राजस्व" और अर्थ सम्बन्धी सप्लीमेंट के लेखक का कथन है कि सन् १९२३-२४ में जो ६४ करोड़ रुपये सेना में खर्च होने का अनुमान किया गया हैं, वह वास्तव में ९० करोड़ समझा जाना चाहिये। यह केन्द्रीय सरकार के कुल व्यय का ७० फ़ी सदी होता है।

वृद्धि के कारण—(क) सन् १८५७ ई० के सिपाही विद्रोह के पहिले यहां अंगरेज़ सिपाहियों की संख्या ३९ हज़ार और देशी सिपाहियों की २३१ हज़ार थी। विद्रोह के पश्चात् सरकार ने तय किया कि प्रति दो देशी सिपाहियों के पीछे एक अंगरेज़ी सिपाही रक्खा जाय, और भारतीय सेना का प्रबन्ध इंगलैंड के युद्ध विभाग अर्थात् वार आफिस (War office) से

हो । एक अंगरेज़ सैनिक उसी पद पर कार्य करने वाले देशी सैनिक की अपेक्षा सब मिला कर प्रायः पांच छः गुना वेतन पाता है । इसके अतिरिक्त उनका तथा उच्च अंगरेज़ अफसरों का, इँगलैंड से आने जाने तथा पेंशन का व्यय भी भारत सरकार को देना पड़ता है ।

(ख) वेतन और पेन्शन के अतिरिक्त अंगरेज़ सैनिकों को तरह तरह के अलाउंस मिलते हैं । अयोग्य तथा मरे हुये सिपाहियों के घर वालों को धन देने के लिये ख़ैरात की मद्द खुली हुई है । महा युद्ध के वाद वार आफ़िस ने दो नयी मद्दें और निकाल दी हैं । उनमें एक का नाम है बेकारी का बीमा, और दूसरी का, व्याह का भत्ता । कमेटियों की बैठक और विनिमय आदि अन्य अन्य मद्दों में भी वार आफ़िस भारत सरकार से प्रति वर्ष करोड़ों रुपये लेता है ।

(ग) अँगरेज़ सिपाही यहां थोड़े दिन नौकरी करते हैं, ये भारतवर्ष के व्यय से शिक्षा पाकर ४।५ वर्ष के लिये यहाँ आते हैं, और पीछे लौटकर जन्म भर के लिये भारत के धन से मौज उड़ाते हैं, और ब्रिटिश सरकार की रिज़र्व (रक्षित) सेना का काम देते हैं।

(घ) युद्ध की नई नई आविष्कृत बहु-मूल्य वैज्ञानिक सामग्री भी सैनिक व्यय को अधिकाधिक बढ़ाती रहती है ।

(ङ) भारत-सरकार ने सन् १८५६ की पश्चिमोत्तर सीमा से आगे बढ़ कर देश को बड़ी हानि पहुंचाई है । वज़ीरिस्तान में

वह प्रति वर्ष करोड़ों रुपये स्वाहा करती है। कम उपजाऊ भूमि में निवास करने वाली स्वतन्त्रता-प्रेमी वीर जातियों की प्यारी स्वतंत्रता में हस्तक्षेप करने से सरकार की नैतिक और आर्थिक हानि अनिवार्य ही है।

(च) भारतवर्ष की सीमा से बाहर भारतवर्ष का रुपया ख़र्च करने के लिये ब्रिटिश पार्लियामेण्ट की स्वीकृति की आवश्यकता होती है। उस समय कुछ वाद-विवाद तो होता है, पर प्रायः स्वीकृति मिलने में शंका नहीं होती। "सन् १८३८ ई० से १९०० तक अफ़गानिस्तान, सूदान, चित्राल, तिब्बत ट्रांसवाल आदि में १२ युद्ध हुए। इन युद्धों से, तथा गत महायुद्ध के समय मेसोपोटेमियाँ और केनिया के युद्धों से ब्रिटिश साम्राज्य की वृद्धि हुई है, फिर भी इन युद्धों के ख़र्च का बड़ा हिस्सा भारतवर्ष को देना पड़ा है। इसके विपरीत उपनिवेशों के लिये रखी हुई सेना, जल-सेना आदि का ख़र्च इँगलैंड के राज-कोष से दिया जाता है।"

(छ) भारतवर्ष को इँगलैंड के जहाज़ी बेड़े के ख़र्च में भाग लेना पड़ता है। कहा जाता है कि नाम-मात्र के ख़र्च से भारत की रक्षा हो रही है। वास्तव में यह बेड़ा ब्रिटिश साम्राज्य की रक्षा करने और संसार में उस की प्रभुता बनाये रखने के लिये है। यदि यही माना जाय कि उससे भारतवर्ष की भी रक्षा होती है, तो यह रक्षा भी ब्रिटिश साम्राज्य और विशेषतया ब्रिटिश द्वीपों के स्वार्थों की रक्षा के लिये है।

किफ़ायत कमेटी का मत--किफ़ायत कमेटी ने सेना सम्बन्धी विविध भागों में की जाने वाली किफ़ायत की ब्यौरा जंगी लाट के हाथ में छोड़ते हुए, यह मत प्रकाशित किया है—

क—लड़ने वाली फ़ौज घटा कर तीन करोड़ की किफ़ायत की जाय।

ख—प्रबल रक्षित सेना रखी जाय, जिससे युद्ध के समय हिन्दुस्थानी बटालियनें २० फी सदी घटाई जा सकें।

ग—मोटर गाड़ियां जंगी जहाज़ और स्टाक घटाये जांय, सामान-संग्रह और फ़ौजी कार्य में किफ़ायत की जाय।

कमेटी ने यह स्वीकार करते हुए भी कि यहाँ शांति काल में भी युद्ध-काल की तरह सेना रक्खी जाती है, सैनिक व्यय में केवल १०॥ करोड़ की किफ़ायत की सिफ़ारिश की है। भारतवर्ष की भयंकर दरिद्रता को देखते हुए उसे इस मद्द में अधिक नहीं, तो इससे तिगुनी किफ़ायत की तो सिफ़ारिश करनी चाहिए थी।

सैनिक ख़र्च घटाने के उपाय-(क) भारतीय सेना का इँगलैंड के वार-आफ़िस से सम्बन्ध तोड़ कर उसका प्रबन्ध भारत-सरकार के हाथ में दिया जाय, और भारतीय व्यवस्थापक सभा के मतानुसार इस विभाग का व्यय निश्चय हुआ करे। इस समय वार-आफ़िस मन माना ख़र्च भारत सरकार पर डाल देता है; यह अन्याय है।

(ख) अँगरेज़ी सैनिक जितने दिन यहाँ नौकरी करें, उतने दिन का उचित वेतन उन्हें दिया जाय, उनकी शिक्षा का भार ब्रिटिश सरकार अपने ऊपर ले, क्योंकि उसका अधिकांश लाभ उसे ही मिलता है। अँगरेज़ी सैनिकों के अलाउंस और पेंशन में भी उचित कमी की जाय।

(ग) सीमा पार की स्वतंत्रता प्रेमी जातियों की स्वतंत्रता में बिलकुल हस्तक्षेप न किया जाय, वहां से सब सेना हटा ली जाय।

(घ) सरकार प्रजा को संतुष्ट रखे और उसके बल को अपना बल समझे, विश्वास पूर्वक सेना का भारतीयकरण हो अर्थात् ख़र्चीला ब्रिटिश भाग कम करके उसके स्थान में वीर, देश प्रेमी भारत संतान को भरती किया जाय। भारतवासियों की सैनिक शिक्षा को समुचित व्यवस्था हो, जिससे समय पर स्वदेशवासी स्वयं अपनी रक्षा कर सकें, और स्थायी सेना यथा-शक्ति कम रखनी पड़े।

११—सिविल व्यय, और रेलों में किफ़ायत करने की रक़म—यह एक असाधारण मद्द है। सन् १६२३-२४ ई० का बजट उपस्थित करते हुए राजस्व-सदस्य ने कहा था कि ४ करोड़ रुपये कम ख़र्च किये जायंगे। वह उस समय यह न बता सके कि किस मद्द में किस प्रकार यह ख़र्च कम होगा। इस लिये यह रकम इस विशेष मद्द में डाली गयी।

१२---प्रान्तों का देना लेना—केन्द्रीय सरकार को प्रान्तीय सरकारों का जो देना लेना होता है, वह इस मद्द में डाला जाता है।

केन्द्रीय सरकार के खर्च के नक्शे में दी हुई मद्दों का वर्णन होचुका। इस परिच्छेद को समाप्त करने से पूर्व 'होम चार्जेज़' का भी उल्लेख कर देना आवश्यक है।

होम चार्जेज़ (Home Charges)—भारतवर्ष से यहाँ के शासन-व्यय निमित्त बहुत सा धन प्रति वर्ष इँगलैंड जाता है। इसे होम चार्जेज़ या विलायती खर्च कहते हैं; स्व० श्री० दादाभाई नौरोजी ने इस धन को 'भारत के लूट के रुपये' की संज्ञा दी है। अन्य लेखकों ने इसे 'सलामी का धन' या 'चूसनी' (Drain) का माल कहा है।

विदित हो कि सन् १९१३-१४ ई० में 'होम चार्जेज़ में कुल २,०३,११,४२३ पौंड, अर्थात् ३०,४६,७१,३४१ रु०, व्यय हुए थे। उस समय से सन् १९२१—२२ ई० तक आठ वर्ष में इस मद्द की रक़म लगभग डेढ़ गुनी हो गयी; १४,२४,१६,३९२ रु० का व्यय बढ़ गया। अतः प्रति वर्ष औसत वृद्धि लगभग दो करोड़ रुपये हुई। इस का कारण यह है कि भारतवर्ष के जिम्मे प्रति वर्ष वेतन आदि के अतिरिक्त पेन्शन वगैरह का ख़र्च बढ़ता जाता है।

इस ख़र्च के अन्तर्गत भिन्न भिन्न मद्दों का ब्यौरा इस प्रकार है:—

मद्द	१९२१-२२ का हिसाब; रुपयों में	१९२३--२४ का अनुमान, रुपयों में
(क) आय प्राप्ति का व्यय	१३,१०, १९२	५१,६६,०००
(ख) रेल के हिसाब में	१५,४६,५६,१८६	१५,५६,६४,०००
(ग) नहर के हिसाब में	३७, ५३५	……
(घ) डाक और तार	……	४०,८७,०००
(ङ) ऋण का सूद	५,२८,६७,१६१	६,१२,५६,०००
(च) सिविल शासन	१,०४,८६,०९२	१,१४,६०,०००
(छ) मुद्रा, टकसाल और विनिमय	६३,६६,४६६	६५,६६,०००
(ज) मुल्की मकानात आदि	२,६०,००३	१,४४,०००
(झ) विविध	३,७२,३२,५३६	३,५७,३३,०००
(ञ) सेना के हिसाब में	१८,३५,०२,५५७	१५,०६,५७,०००
योग	४४,७०,८७,७३७	४६,०७,६६,०००

होम चार्जेज़ के अन्तर्गत सूद में यहां से प्रति वर्ष एक बड़ी रक़म जाती हैं। जिस पूंजी पर वह सूद दिया जाता है वह सब उत्पादक कार्यों में ही लगी हुई नही है, जो उत्पादक कार्यों में है, उसका भी पूर्ण लाभ इस देश को नहीं मिलता। रेल आदि का बहुत सा समान यहां तैयार कराया जा सकता है, फिर भी सरकार उसके लिये किसी न किसी बहाने से रुपया इंगलैंड भेजती रहती है। स्वदेशी उद्योग धन्धों की उन्नति की उसे यथेष्ट चिन्ता नहीं। इन सब बातों से यहां ख़र्च का भार बढ़ता जाता है।

सरकारी खर्च में वृद्धि—केन्द्रीय सरकार के ख़र्च की मात्रा गत पचास वर्ष से बढ़ रही है। महायुद्ध के समय से तो यह वृद्धि बहुत ही अधिक हो गयी है।

सन् १९१३—१४ ई० में ख़र्च ६९.७ करोड़ हुआ था। सन् १९२१—२२ ई० का खर्च १४२.८ करोड़ हुआ है। इससे मालूम हो जाता है कि केवल ८ वर्ष में, सिर्फ केन्द्रीय सरकार के व्यय में ७३ करोड़ रुपये से अधिक की वृद्धि हो गई और वह दूने से भी अधिक हो गया।

निर्धन भारतवासियों के लिये यह कैसी निर्दयता का भार है, यह पाठक स्वयं विचार लें।

सरकार को घाटा—पिछले कई वर्ष से सरकार की भयंकर रूप से बढ़ी हुई आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं हो पाती।

बार बार उसे घाटा रहता है। घाटे की कुछ रक़में इस प्रकार हैं—

सन् १९१८-१९ ई०	६ करोड़ रुपये
" १९१९-२० "	२४ " "
" १९२०-२१ "	२६ " "
" १९२१-२२ "	२८ " "
" १९२२-२३ "	१७ " "
योग	१०१ करोड़ रुपये

इस प्रकार केवल पांच साल में १०१ करोड़ रुपये का घाटा रहा !!!

किफ़ायत कमेटी, सिर्फ़ साढ़े उन्नीस करोड़ की बचत—भारत सरकार ने नए नए टैक्स लगाकर अपनी आर्थिक स्थिति सुधारनी चाही, पर वह सफल न हुई। अन्ततः सन् १९२२ ई० में लार्ड इंचकेप की अध्यक्षता में एक किफ़ायत कमेटी इस लिये नियुक्त हुई कि वह भारत सरकार को राय दे कि उस के ख़र्च में कितनी कमी हो सकती है। इस कमेटी ने निम्न लिखित हिसाब से सिर्फ १९॥ करोड़ रुपये का ख़र्च घटाने की सिफ़ारिश की है—

सेना में लगभग १०॥ करोड़, रेलवे में ४॥ करोड़, डाक और

तार में १ करोड़ ३७ लाख तथा अन्य मुल्की महकमों में ३करोड़ कुछ लाख घटाने का परामर्श हैं।

इस किफ़ायत के सम्बन्धमें कुछ विशेष बातें हम, उक्त मद्दों का व्यौरा देते हुए, पहले प्रसंगानुसार कह आये हैं। यह रिपोर्ट अत्यन्त असंतोष-प्रद है, जिस सरकार का वार्षिक व्यय डेढ़ अरब के लगभग हो, और जिसकी अर्थिक स्थिति ऐसी ख़राब हो, उस की इतनी सी किफ़ायत से क्या कल्याण हो सकता है? भिन्न भिन्न मद्दों में जो किफायत होनी चाहिये, उस का विचार हम कर चुके हैं। वास्तव में भारतीय शासन प्रणाली में नीति का मौलिक सुधार होने पर ही आर्थिक परिस्थिति में यथेष्ट सुधार होगा।

अस्तु, अब हम अगले परिच्छेद में केन्द्रीय आय का विचार करते हैं।

छठा परिच्छेद

केन्द्रीय आय

भारत सरकार की आय—आगे भारत सरकार की तुलनात्मक आय दी जाती है, इससे मालूम होगा—

क—किस किस मद्द से सरकार को कितनी आय होती है।

ख—सन् १९१३-१४ ई० (युद्ध से पहिले) की अपेक्षा अन्य वर्षों में भिन्न भिन्न मद्दों की आय कितनी बढ़ी है। सुधारों के बाद हिसाब रखने के ढंग में परिवर्तन हो गया है। तुलना ठीक करने के लिये सन् १९१३-१४ ई० की आय के अंक उस हिसाब से (किफ़ायत कमेटी की रिपोर्ट के आधार पर) लिये गये हैं, जैसे वह उस वर्ष सुधार हो जाने की दशा में होते।

मद्दों का ब्यौरा और आलोचना-नक्शे के बाद हम उसमें दिये हुए सन् १९२२-२३ ई० के अनुमानित आय की मद्दों का ब्यौरा देते हुए उनकी थोड़ी थोड़ी आलोचना करेंगे।

स्मरण रहे कि जो आय ऐसी मद्दों के सम्बन्ध में है, जिनके विषय प्रान्तीय हैं, वह केवल उन छोटे २ प्रान्तों के सम्बन्ध में है जो प्रबन्ध के लिये चीफ कमिश्नरों के, परन्तु वास्तव में केन्द्रीय सरकार के ही अधीन हैं।

भारत सरकार की आय (लाख रुपयों में)

मद्द	१९१३-१४ हिसाब	१९२१-२२ हिसाब	१९२२-२३ अनुमान	१९२३-२४ अनुमान
१—आयात निर्यात कर	१११४	३४४१	४५४२	४५०९
२—आय कर	२९१	१८७४	२२१२	१९०५
३—नमक	५१५	६३४	६८६	११७१
४—अफ़ीम	२४३	३०७	३०९	३१३
५—अन्य आय	१८३	२२०	२३६	२४५
६—रेल	२६४३	१५२१	३१११	२८२७
७—आबपाशी	६	६	७	११
८—डाक और तार	८७	५७	१७१	२०३

९—सूद की आय	११४	१११	८४	२५१
१०—सिविल शासन	३४	७७	८७	६२
११—मुद्रा, टकसाल व विनिमय	१२१	४३७	३२२	२६९
१२—सिविल निर्माण कार्य	७	११	११	११
१३—विविध	३१	७१९	६६	४८
१४—सैनिक आय	२०५	८०७	५५४	२८१
१५—प्रान्तिक सरकारों से प्राप्ति	९८३	१२९९	९२१	९२१
कुल आय	६५७७	११५२१	१३३२३	१३१११
कमी	...	२७६५	९१६	...
योग	६५७७	१४२८६	१४२३९	१३१११

आयात-निर्यात-कर (कस्टम्स)—इस मद्द का ब्यौरा इस प्रकार है—

पदार्थ	दर	आय (रुपये)
१ सेना का स्टोर और युद्ध की सामग्री	३० फ़ीसदी	८,५०,०००
२ कोयला, कोक और पेटेन्ट ईंधन	८ आना टन	५,००,०००
३ मद		
(अ) एल, बियर, पोर्टर, सीडर, आदि	८ आना गेलन	१६,००,०००
(आ) स्प्रिट और लिकर	७॥ फीसदी	२,४३,००,०००
(इ) वाइन (शराब)	४॥) से ६) गेलन	१४,००,०००
४ दियासलाई	१॥) फ़ी ग्रास बक्स	२,०५,००,०००
५ अफ़ीम	२४) सेर	३,०००
६ मिट्टी का तेल	≈)॥ गेलन	१,३०,००,०००
७ शक्कर	२५ फीसदी	६,२५,००,०००
८ तम्बाकू	त्रिविध	१,४०,००,०००
९ सिगरेट	७५ फीसदी	१,०५,००,०००
१० मशीनें	२॥ ”	५,००,०००
११ अन्य पदार्थ	२॥ ”	५०,००,०००
१२ सूत	५ ”	
१३ धातुएँ, लोहा और फौलाद	१० ”	१,७३,००,०००

१४ रेलवे की सामग्री	१० फीसदी	१,७३,००,०००
१५ भोज्य और पेय	१५ "	६४,००,०००
१६ कच्चा माल	१५ "	४५,००,०००
१७ तैय्यार की गई वस्तुएँ		
(क) काटने का समान आदि	१५ "	२,०२,००,०००
(ख) लोहा, फ़ौलाद के अतिरिक्त धातुएँ	१५ "	८६,००,०००
(ग) सूती चीज़ें	१५ "	५,२०,००,०००
(घ) रुई का तैयार सामान	१५ "	६५,००,०००
(ङ) दूसरी तैय्यारी की हुई चीज़ें	१५ "	४,५४,००,०००
१८ विविध	१५ "	६५,००,०००
१९ मोटर और साइकल	३० "	८०,००,०००
२० रबड़, टायर और ट्यूब	३० "	२६,००,०००
२१ रेशमी कपड़े	३० "	८०,००,०००
२२ अन्य सामान	३० "	६५,००,०००
आयात कर का पूर्ण योग		३७,४७,५३,०००

२३ निर्यात कर		
(अ) खाल और चमड़ा	१५	६२,०००००
(ब) कच्चा जूट	१) से ४॥) तक फी गांठ	३,२०,००,०००
तैयार जूट	२०) से ३२) तक फी टन	
(स) चावल	≡) मन	१,१०,००,०००
(द) चाय	१॥) प्रति सौ पौंड	६०,००,०००
२४ सामुद्रिक कर	विविध	२०,००,०००
२५ स्थल कर	"	१२,००,०००
२६ सूती माल	३॥ फीसदी	२,३५,००,०००
२७ मोटर स्प्रिट	विविध	७५,००,०००
२८ मिट्टी के तेल	१आनाफीगैलन	४०,००,०००
२९ गोदाम और बन्दर का किराया आदि		१०,००,०००
निर्यात कर और आयात कर का योग		४६,६१,५३,०००
घटाओ -वापिसी कर		१,४६,६९,०००
आय		४५,४१,८४,०००

औद्योगिक देशों में इस मद्द की ही आय प्रधान आय होती है। भारतवर्ष में सरकार को इस मद्द से होने वाली आय, अन्य मद्दों की आय की अपेक्षा अच्छी होने पर भी बहुत अधिक नहीं है। सरकार की मुक्त द्वार-व्यापार नीति (Free trade policy) इसके लिये उत्तरदायी है। भारत सरकार को आर्थिक स्वतंत्रता नहीं है, वह अपनी इच्छानुसार आयात निर्यात पर कर नहीं लगा सकती, इसका उल्लेख पहिले किया जा चुका है। सरकार, ब्रिटिश व्यापारियों का बेहद्द दबाव मानती है, इसी लिये यहां तैयार हुए सूती माल पर साढ़े तीन फ़ीसदी का कर लगाया जाता है; यह सर्वथा अनुचित है।

सरकार को चाहिये कि विदेश से आने वाले तैयार पदार्थों पर, एवं यहां से बाहर जाने वाले कच्चे पदार्थों पर खूब कस कर लगावे, जिससे विदेशी माल यहां बहुत अधिक महंगा होने के कारण उस की आयात कम हो, और स्वदेशी उद्योग धंधों को उत्तेजना मिले।

संयुक्त प्रान्त का अनुमानित व्यय (१९२२-२३); (लाख रुपयों में)

मद्द	हस्तान्तरित	रक्षित	जिसकी मंजूरी देने का व्यवस्थापक परिषद् को अधिकार था	नहीं था	योग
१—भारत सरकार को देना	...	२४०	...	२४०	२४०
२—शासन व्यवस्था	...	१३८	१०७	३१	१३८
३—न्याय विभाग	...	६७	५०	१७	६७
४—जेल विभाग	...	३५	३४	१	३५
५—पुलिस विभाग	...	१७१	१६३	८	१७१
६—माल गुज़ारी	...	७८	७८	...	७८
७—शिक्षा	१३४	७	१३३	८	१४१
८—चिकित्सा और स्वास्थ	४१	...	३४	७	४१
९—कृषि	२८	...	२६	२	२८
१०—उद्योग धंधे	६	...	८	१	६

मद्द	हस्तान्तरित	रक्षित	जिसकी मंजूरी देने का व्यवस्थापक परिषद् को अधिकार		योग
			था	नहीं था	
११—जंगल	...	७९	७५	४	७९
१२—सिविल निर्माण आदि	१२६	१	१२१	६	१२७
१३—आबपाशी	...	१३७	८०	५७	१३७
१४—आबकारी रजिस्टरी०	१३	८	२१	...	२१
१५—मुद्रा और विनिमय०	..	६	१	५	६
१६—स्टेशनरी छपाई	...	१३	१३	...	१३
१७—ऋण का सूद	...	३४	...	३४	३४
१८—अकाल निवारण	...	३२	...	३२	३२
१९—पेन्शन आदि	...	५४	५२	२	५४
२०—कंटिजैंसी	...	२	२	...	२
२१—कर्ज़ा जोड़ दिया जायगा	...	८८	६३	२५	८८
कुल योग	३५१	११९०	१०६१	४८०	१५४१

आय कर और सुपर टैक्स—इस का ब्यौरा यह है:—

प्रान्त	आय कर	सूपर टैक्स	
देहली	१२,१०,०००	... ...	रु०
बलोचिस्तान	४६,०००	... ...	,,
पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त	५,७३,०००	२२,०००	,,
मद्रास	१,८०,०१,०००	५६,००,०००	,,
बम्बई	५,३०,१४,०००	२,६६,५२,०००	,,
बंगाल	४,१५,००,०००	३,०५,००,०००	,,
संयुक्त प्रान्त	१,०१,२०,०००	४५,००,०००	,,
पंजाब	६५,२६,०००	७,०८,०००	,,
बर्मा	१,५१,००,०००	६१,००,०००	,,
बिहार उड़ीसा	३७,८२,०००	११,२२,०००	,,
मध्य प्रान्त	४४,८२,०००	२०,७१,०००	,,
आसाम	१०,४३,०००	१,००,०००	,,
भारतवर्ष के अन्य प्रान्त	८६,८८,०००	३,३५,०००	,,

योग	१६,४३,८८,००० + ८,०७,१०,००० = २४,५०,६८,०००	रुपये
घटाओ—वापसी कर	२,१७,८७,०००	,,
असली आय	२२,३३,११,०००	रुपये
घटाओ—प्रान्तों का भाग	२१,७२,०००	,,
केन्द्रीय सरकार की आय	२२,११,३६,०००	रुपये

व्यक्तियों, रजिस्टरी न की हुई फ़र्मों और संयुक्त हिन्दू परिवारों पर आय कर की दर यह है:-

दो हज़ार रुपये से कम वार्षिक आय पर कुछ कर नहीं लगता।

दो हज़ार से ४९९९ तक ५ पाई फ़ी-रुपया।

पांच हज़ार से ९९९९ तक ६ पाई फ़ी-रुपया।

दस हज़ार से १९,९९९ तक ९ पाई फ़ी-रुपया।

बीस हज़ार से २९,९९९ तक एक आना फ़ी-रुपया।

तीस हज़ार से ३९,९९९ तक १५ पाई फ़ी-रुपया।

चालीस हज़ार या इससे ऊपर १८ पाई फ़ी-रुपया।

प्रत्येक कम्पनी और रजिस्टरी की हुई फ़र्म पर, चाहे उसकी आमदनी कुछ ही हो, डेढ़ आना फ़ी रुपये के हिसाब से आय-कर लगता है।

सूपर टैक्स की दर निम्नलिखित हैं—

(१) पचास हज़ार रुपये से अधिक आय होने की दशा में प्रत्येक कम्पनी पर एक आना फ़ी रुपया है।

(२) संयुक्त हिन्दू परिवार पर ७५,०००) से अधिक आय पर सूपर टैक्स आरम्भ होता है, और एक लाख रुपये तक आय जितनी अधिक हो, उस पर दर एक आना फ़ी रुपया है। एक लाख रुपये से अधिक आय पर सूपर टैक्स उसी दर से लगता है जिस से वह किसी व्यक्ति पर लगता है।

(३) क—व्यक्ति और रजिस्टरी न की हुई फ़र्म पर ५०,०००)
से अधिक की आय पर सूपर टैक्स लगता है
और एक लाख रुपये तक आय जितनी अधिक
हो, उस पर दर एक आना फ़ी रुपया है ।

ख—एक लाख से अधिक की आय पर प्रति पचास
हज़ार तक की वृद्धि पर सूपर टैक्स दो पैसा
फ़ी रुपया बढ़ता है । इस प्रकार डेढ़ लाख तक
दर डेढ़ आना फ़ी रुपया और दो लाख तक दो
आना फ़ी रुपया, इत्यादि ।

ग—साढ़े पांच लाख से आय जितनी अधिक होती
है, उस अधिक आय पर सूपर टैक्स की दर छः
आने फी रुपया है ।

सूपर टैक्स महायुद्ध के समय लगाया गया था। यह अनुमान किया जाता था कि शायद युद्ध के पश्चात् यह बंद हो जाय। परंतु जब कि सरकार का ख़र्च दिन दिन बढ़ता हो जाता है, तो इस दशा में जो टैक्स एक बार चाहे विशेष परिस्थिति में ही लगे, उसका फिर घटना तो प्रायः असम्भव ही हो जाता है ।

भारतवर्ष में आय कर और सूपर टैक्स की मद्द में सरकार को अपेक्षा-कृत बहुत कम आय होती है। जब देश का बहुत सा व्यापार आदि विदेशियों के हाथ में हो तो देश वालों की

आमदनी कम होनी ही चाहिए, फिर इस मद्द में सरकार को ही आय अधिक कहाँ से हो ?

३—**नमक**—इस मद्द की आय का ब्योरा इस प्रकार है:—

स्थान	१६२२—२३ का अनुमान रुपये
१—उत्तरीय भारतवर्ष-राजपुताना सांभर झील आदि, सुलतान पुर पंजाब का नमक का पहाड़, कोहाट मंडी, आदि	२,१८,०८,०००
२—मदरास, पूर्वीतट	१,४१,६६,०००
३—बंबई तट और कच्छ की खाड़ी	१,५६,२४,०००
४—बंगाल	१,६२,८०,०००
५—बर्मा	३४,००,०००
६—बिहार उड़ीसा	१,०००
योग	७,१३,०१,०००
घटाओ—वापसी	२७,०६,०००
असली आय	६,८५,०३,०००

नं० १, २, और ३ की आय अधिकतर उन स्थानों में हा बनाये हुए नमक से ही होती है, नं० ४ और ५ की, अधिकतर बाहर से आये हुए नमक से होती है।

सन् १९२२—२३ ई० में सरकार ने ५,२६,००,००० मन नमक के खर्च होने का अनुमान किया परन्तु-कर वृद्धि के कारण उससे कम खर्च की सम्भावना है।

सन् १८८२ ई० से पहले भिन्न भिन्न प्रांतों में इस टैक्स की दर में अंतर था। उस वर्ष सरकार ने सब जगह दो रुपए मन टैक्स लगाया। सन् १८८८ ई० में यह, ढाई रुपये कर दिया गया, बाद में यह क्रमशः घटाया गया। सन् १९०३ ई० में २) रु० हुआ, सन् १९०१ ई० में १।।) और सन् १९०७ ई० में १) रु० मन रहा। सन् १९१६ ई० में अन्यान्य करों की वृद्धि के साथ यह भी बढ़ा, और १) की जगह १।) मन हो गया। उस समय राजस्व सदस्य ने कहा था कि यह कर ऐसा रिजर्व (रक्षित) साधन है, जिसका युद्ध-काल अथवा अन्य आर्थिक संकट के समय उपयोग हो सकता है। सन् १९२२–२३ ई० (शांति-काल) का बजट उपस्थित करते हुए राजस्व सदस्य ने अन्यान्य करों में फिर इसे बढ़ाने का प्रस्ताव किया था। परन्तु व्यवस्थापक सभा के विरोध के कारण उस वर्ष यह न बढ़ सका। सन् १९२३—२४ई० के बजट में फिर आय-व्यय की समानता करने की फ़िकर पड़ी तो सरकार की दृष्टि इसी पर गयी; अन्य करों को वह पहले बढ़ा ही चुकी थी। इस वर्ष भी नमक के कर की वृद्धि का बहुत विरोध हुआ।

परंतु सरकार ने सुधरी हुई व्यवस्थापक सभा के मत की भी घोर अवहेलना करके इसे बढ़ा ही दिया। कुछ लोग इस कर में पार्लियामेंट के उदारता पूर्वक हस्तक्षेप करने की राह देख रहे थे, पर उस की भी परीक्षा हो गयी; भारत सरकार के कार्य का अनुमोदन हुआ, टैक्स पास हो गया और निर्धन प्रजा पर एक भार और बढ़ गया।

नमक एक जीवनोपयोगी पदार्थ है और इसका कर एक ऐसा कर है जो प्रकट अथवा गौण रूप से राजा और रंक, देश के सब आदमियों पर लगता है। नमक तैयार करने का खर्च बहुत थोड़ा होता है, (इस का हिसाब पिछले परिच्छेद में दिया जा चुका है), कुछ किराये में खर्च होता है। इस खर्च को छोड़ कर नमक के मूल्य का सब हिस्सा कर पर निर्भर है। कर-वृद्धि के कारण जब यहां नमक मंहगा हो जाता है, तो पशुओं की कौन कहे, यह मनुष्यों को भी यथेष्ट मात्रा में नहीं मिलता और इसका उपभोग कम हो जाता है। अतः यह कर बिल्कुल उठा दिया जाना चाहिए, अथवा यदि रखना ही हो तो युद्ध से पहिले की दर पर रहे, अधिक नहीं।

४---अफ़ीम—इस मद का ब्यौरा इस प्रकार है—

ठेके की और औषधियों की	
अफ़ीम की बिक्री	२,२५,४५,००० रु०
आबकारी अफ़ीम	८३,८७,००० ”
योग	३,०६,३२,००० ”
घटाओ—वापसी	२,००० ”
आय	३,०६,३०,००० ”

अफ़ीम की अधिकतर आय इस पदार्थ को स्याम, स्ट्रेट सेटलमैंट आदि देशों के लिये, कलकत्ते में नीलाम करने से होती है। केन्द्रीय सरकार प्रान्तीय सरकारों को पहिले २० रु० फी सेर के हिसाब से अफ़ीम बेचती थी, अप्रेल १६२२ ई० से २३ रु० फ़ी सेर की दर से बेचती है। इस बिक्री से जो आय होती है, वह केन्द्रीय सरकार की आबकारी आय होती है।

५---अन्य आय—इसका ब्यौरा इस प्रकार है—

१—मालगुज़ारी	४३,६३,००० रुपये
२—आबकारी	५६,२२,००० ”
३—ग़ैर अदालती स्टाम्प	१०,०८,००० ”
४—अदालती स्टाम्प	१४,२१,००० ”
५—जंगल	२१,६८,००० ”
६—रजिस्ट्री	१,६८,००० ”
७—रजवाड़ों का नज़राना	८८,०५,००० ”
योग	२,३५,८५,००० ”

उक्त सात मद्दों में से रजवाड़ों का नज़राना छोड़ कर शेष सब के विषय प्रान्तीय हैं। जगल की आमदनी लकड़ी तथा अन्य पदार्थों की बिक्री से होती है। रजिस्ट्री में पुराने क़ानूनी काग़ज़ों की खोज तथा दस्तावेज़ों की रजिस्ट्री फ़ीस शामिल है। रजवाड़ों से नज़राना प्रायः उन संधियों के अनुसार आता है, जिनसे पूर्व काल में उनके कतिपय स्थानों का सरकारी स्थानों से परिवर्तन हुआ था, और जिनसे वे अपने राज्यों में फ़ौज रखने के लिये वाधित हुए थे।

६---रेल—इस मद्द का व्यौरा इस प्रकार है—

क—सरकारी रेल	
कुल आय	६६,५७,२६,०००
घटाओ—चलाने का खर्च	६८,०५,७४,०००
कंपनियों को दिया हुआ मुनाफ़ा	६०,००,०००
असली आय	३०,६१,५२,०००
ख—कंपनियों की रेल	१६,४२,०००
योग	३१,१०,६४,०००

रेलवे सम्बन्धी आवश्यक बातों का वर्णन पिछले परिच्छेद में हो चुका है।

७---आबपाशी—यह मद्द प्रान्तीय है।

८---डाक और तार—इस मद्द का ब्यौरा इस प्रकार है—

आय	लाख रुपये
भारत में, डाक और तार की आय	९२३
” ” मनियाडर कमीशन	११०
” ” अन्य आय	४९
” ” इन्डो योरपियन तार	२१
इंगलैंड में ” ” ”	१२
योग	१११५

व्यय	लाख रुपये
भारत में, कार्यालय व्यय	६८१
” ” स्टेश्नरी और छपाई	३२
” ” डाक लाने ले जाने का खर्च	११८
” ” तार की लाइन	६१
” ” विविध	१३
इंगलैंड में, ईस्टर्न मेल को देना	२
” ” अन्य व्यय	३
भारतवर्ष और इंगलैंड में, इंडोयोरपियन तार	३०
योग	९४०

कुल असली आय=१११५—९४०=१७५ लाख रुपये

सभ्य देशों में डाक और तार जनता के सुभीते के लिये होते हैं, यहां इनसे भी आय वसूल करना अभीष्ट है। सरकार ने डाक

का महसूल बढ़ा कर लोगों के पारस्परिक व्यवहार-वृद्धि में बड़ी रुकावट डाल दी है। पार्सलों के महसूल की दर बढ़ने से अब जन साधारण को वी० पी० से पुस्तकें मंगाने का खर्च बहुत कष्ट प्रद हो गया है। इससे साहित्य और शिक्षा प्रचार को बहुत धक्का पहुंच रहा है।

८---सूद--इसका व्यौरा इस प्रकार है—

केन्द्रीय सरकार से दिये हुए ऋण और पेशगी का सूद	३४,५६,००० रु०
रेलवे कम्पनियों को दी हुई पेशगी का सूद	७,५०,००० "
रेलवे कम्पनियों के प्राविडैंट फंड की सिक्यूरिटी का सूद	३७,५५,००० "
विविध	१,६७,००० "
इंगलैंड सूद की विविध आय	३,०३,००० "
योग	८४,३१,००० "

१०---सिविल शासन--इसका ब्यौरा इस प्रकार है--

न्याय विभाग	३,४६,००० रुपये
जेल	११,११,००० "
पुलिस	१३,६३,००० "
बन्दरगाह	२४,२१,००० "
शिक्षा	१,१७,००० "
चिकित्सा	५०,००० "
स्वास्थ	३,०७,००० "
कृषि	६,८०,००० "
उद्योग धंधे	२,००,००० "
विविध विभाग	२०,५१ ००० "
योग	८६,४६,००० "

इन विभागों में से बन्दरगाहों को छोड़ कर अन्य सब विषय प्रान्तीय है।

११---मुद्रा, टकसाल और विनिमय--- इसका-ब्यौरा इस प्रकार है--

मुद्रा	३,०३,१३,००० रुपये
टकसाल	१६,१८,००० "
विनिमय	... ... "
योग	३,२२,३१,००० रुपये

इस मद्द में पेपर करेंसी रिज़र्व की सिक्यूरिटियों की रक़म का सूद, तथा भारतवर्ष के लिये पैसा, इकन्नी आदि सिक्के, एवं विदेशों के लिये अन्य सिक्के ढालने का लाभ सम्मिलित है। (भारतवर्ष के लिये रुपया ढालने में जो लाभ होता है वह सुवर्ण स्टैंडर्ड कोष में डाला जाता है)

१२---**सिविल निर्माण कार्य**--इस मद्द में सरकारी मकानों का किराया, उनकी बिक्री का रुपया तथा अन्य इस प्रकार की विविध आय सम्मिलित है।

१३---**विविध**--इस मद्द में पेन्शन सम्बन्धी आय के अतिरिक्त, सरकारी स्टेशनरी अथवा पुस्तक आदि की बिक्री से होने वाली आय सम्मिलित है। कुल मद्द का ब्यौरा इस प्रकार है--

पेंशन सम्बन्धी आय	२३,०१,००० रुपये
स्टेशनरी और छपाई	१७,४१,००० "
विविध	२५,६९,००० "
योग	६६,११,००० "

१४---**सैनिक आय**--इस मद्द में सैनिक स्टोर, कपड़े, दूध, मक्खन तथा पशुओं की बिक्री से होने वाली आय सम्मिलित है। कुल आय का ब्यौरा इस प्रकार है--

स्थल सेना—

काम करने वाली	४,६४,१६,००० रुपये
काम न करने वाली	२४,४५ ००० "
समुद्री सेना	२०,२३,००० "
सैनिक निर्म्माण कार्य	१५,३०,००० "
योग	५,५४,१४,००० "

(१५) प्रान्तों से मिलने वाली आय—इसका वर्णन पहले किया जा चुका है। यह आय सर्वथा अनुचित है। इसके कारण प्रान्तों को अपनी उन्नति करने का अवसर नहीं मिलता। भारत-सरकार को सेना आदि में अपना ख़र्च कम करना चाहिये और आयात-कर आदि द्वारा आय बढ़ानी चाहिये। अपने भयंकर ख़र्चों का भार प्रान्तों पर लाद देना अनुचित है।

सरकारी आय की वृद्धि—पिछले परिच्छेद में हम यह बता आये हैं कि केन्द्रीय सरकार के खर्च की मात्रा गत पचास वर्ष से बढ़ रही है। सरकार ने उस बढ़े हुए ख़र्च के वास्ते अपनी आय बढ़ाने के लिये विविध प्रयत्न किये, प्रजा पर नये नये टैक्स लगाये। महायुद्ध के समय से तो सरकारी आय बहुत ही बढ़गयी है। सुधारों के बाद केन्द्रीय सरकार के हिसाब रखने के ढंग में कुछ परिवर्तन हो गया है। अतः तुलना

कार्य की सुविधा के लिये, हम सन् १९१३-१४ ई० की आय के अंकों को उस हिसाब से देते हैं, जैसे वह उस वर्ष से पहिले ही सुधार हो जाने की दशा में रखे जाते। इस प्रकार उस वर्ष की आय ६५-८ करोड़ रुपये थी; सन् १९२१-२२ ई० में वह ११५-२ करोड़ हुई। इस से स्पष्ट है कि आठ ही वर्ष में सरकार की आय लगभग पचास करोड़ रुपये बढ़ गयी। पुनः इस पर भी उसे २७.६ करोड़ रुपये की कमी रही। यह रकम भी प्रजा के ही ऊपर पड़ी। इस तरह आठ वर्ष पहिले की अपेक्षा प्रजा पर दुगने से अधिक भार हो गया। क्या यह शोचनीय नहीं है?

प्रान्तीय व्यय

हम केन्द्रीय व्यय और आय का वर्णन कर चुके। अब प्रान्तों के सम्बन्ध में विचार करना है। पहले प्रान्तीय व्यय को लेते हैं।

प्रान्तों का तुलनात्मक व्यय—आगे दिये हुए नक्शे से भिन्न भिन्न प्रान्तों की पृथक् पृथक् मद्दों का तुलनात्मक व्यय मालूम हो जाता है।

अनुमानित व्यय [१९२२-२३]; लाख रुपयों में

मद्द	बम्बई	मदरास	बंगाल	संयुक्त प्रान्त	पंजाब	बर्मा	बिहार उड़ीसा	मध्यप्रान्त बरार	आसाम	योग
माल गुजारी	२११	१७६	३२	७८	४६	५८	२०	५०	१४	६६१
आबपाशी	३०	३२	१७	६	४	१८	१०	८	२	१२७
स्टाम्प और रजिस्टरी	१३	३०	२५	८	३	३	६	५	१	६७
जङ्गल	५६	४१	१३	७७	५६	१०५	८	३२	१२	४०८
आबपाशी	८०	७५	२५	५८	१००	५४	२४	४४	१	४६१
सूद	१२३	७	१०	३४	–४१	.	१	३	...	१३७
शासन व्यवस्था	७४	६२	११८	१३८	६२	६०	६८	५२	२७	७११
न्याय, जेल, पुलिस, बन्दरगाह	२८२	३२८	३४५	२७३	१८६	३०२	१३७	१०४	३७	१६६७

शिक्षा	१७४	१६१	१२७	१४१	१०५	७३	५४	५८	२६	९१९
चिकित्सा और स्वास्थ्य	६१	८६	७१	४१	४५	५०	२०	२२	१५	४१२
कृषि, उद्योग और विविध	३६	६७	३९	३९	४७	२९	१७	२२	६	३०२
विनिमय	१३	१६	१०	६	८	१३	२	४	२	७४
सिविल निर्माण कार्य	१३८	११६	११२	८०	१२९	२०९	७०	७५	३२	९६१
अकाल निवारण	६४	७	२	३३	४	१	९	२९	...	१४९
पेन्शन	५३	४६	४९	५३	३६	२६	२०	२१	...	३०४
स्टेशनरी छपाई	२०	२८	२४	१३	११	१३	१०	८	...	१२७
विविध	३०	१६	४	५	४८	२७	४	३	...	१३७
भारत सरकार को देना लेना	५६	३४८	...	२४०	१७१	६४	...	२२	१५	९२०
योग	१५१४	१६८३	१०२३	१३२३	१०६०	११३१	४८३	५६२	१९०	८९७३

नोट-पीछे दिया हुआ नक्शा, तथा इसी प्रकार का प्रान्तीय आय सूचक नक्शा हमारी इस पुस्तक के लिये, श्री० पं० दया शंकरजी दुबे, एम, ए, एल, एल, बी, ने "इन्डियन ईयर बुक" के अङ्को से तैयार किया हैं।

संयुक्त प्रान्त का उदाहरण--सब प्रान्तों की भिन्न भिन्न मद्दों के पृथक् २ वर्णन से विषय का विस्तार बहुत बढ़ जायगा, और वह विशेष लाभकारी भी न होगा। एक प्रान्त के उदाहरणसे अन्य प्रान्तों के विषयमें भी बहुत कुछ ज्ञान हो जाता है। अतः हम केवल संयुक्त प्रान्त के व्यय का व्यौरेवार वर्णन करते हैं।*

---

* इस में हमें 'स्वार्थ' में प्रकाशित, श्री-पं० दयाशंकर जो दुबे, एम ए० के लेख से विशेष सहायता मिली है।

आगे दिये हुए नक्शे यह से मालूम हो जायगा कि संयुक्त प्रान्त को, सन् १९२२-२३ ई० में भिन्न भिन्न मद्दों का कुल अनुमानित व्यय कितना था; उनमें से कितना हस्तान्तरित विषयों के लिये था और कितना रक्षित विषयों के लिये; एवं प्रान्तीय व्यवस्थापक सभा को कितने व्यय की मंजूरी देने का अधिकार था और कितने को नहीं।

इस नक्शे का योग, संयुक्त प्रान्त के पिछले योग से नहीं मिलेगा, कारण कि कुछ मद्दे कम ज्यादह है।

मद्दों का ब्यौरा और आलोचना—अब हम नक्शे की भिन्न भिन्न मद्दों के व्यय का ब्यौरा देते हुए उनको आलोचना करते हैं। हम यह बताने का प्रयत्न करेंगे कि किन किन विभागों में ख़र्च घटाना और किन किन में बढ़ाना उपयोगी होगा।

(१) भारत सरकार को देना—इस के सम्बन्ध में हम पहिले भी कह चुके हैं। भारत सरकार के ख़र्च की कई मद्दों में बहुत किफ़ायत की जा सकती है, खास कर फ़ौजी ख़र्च तो बहुत घटाया जा सकता है। इस के अतिरिक्त भारत सरकार के पास आयात-कर और आय-कर की तरह के ऐसे ज़रिये हैं, जिनके द्वारा वह अपनी आमदनी आसानी से बढ़ा सकती है। गत पांच वर्षों में इन ज़रियों से उसने अपनी आमदनी बढ़ाई भी है। प्रान्तीय सरकारों के पास आमदनी बढ़ाने के लिये ऐसे सुलभ साधन नहीं हैं, और न उन्हें कर बढ़ाने की अधिक गुंजायश ही है। प्रान्तों की बढ़ती हुई आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिये और उनकी आर्थिक दशा सुधारने के लिये आवश्यक है कि कृषि, शिक्षा और उद्योग-विभाग पर अधिक रुपया ख़र्च किया जाय। इस लिये प्रांतीय सरकारों द्वारा इस रक़म का दिया जाना शीघ्र ही बंद हो जाना चाहिए।

(२) शासन व्यवस्था—इस मद्द के ख़र्च का ब्यौरा इस प्रकार है—

प्रान्तीय व्यय

१	गवर्नर का वेतन	१.२०	लाख रुपये
२	गवर्नर सम्बन्धी अन्य खर्च	१.६०	"
३	कार्य कारिणी सभा के दो सदस्यों का वेतन	१.२८	"
४	दो मंत्रियों का वेतन	१.२८	"
५	गवर्नर, मंत्रियों और कार्य कारिणी सभा के सदस्यों के दौरे का खर्च	१.२२	"
६	व्यवस्थापक परिषद् का खर्च	१.३८	"
७	सेक्रेटेरियट	१०.६३	"
८	रेवन्यू बोर्ड	३.५४	"
९	हिसाब की जाँच	.७५	"
१०	कमिश्नरों का वेतन और आफ़िस खर्च	७.५०	"
११	कलेक्टर; असिस्टेन्ट कलेक्टर, डिप्टी कलेक्टर आदि का वेतन और आफ़िस खर्च	७७.०८	"
१२	तहसीलदार, नायब तहसीलदार और अन्य अफ़सरों का वेतन तथा आफ़िस ख़र्च	२९.१३	"
	योग	१३७.५९	"

यद्यपि गवर्नर, और उनकी कार्य कारिणी सभा के सदस्यों के वेतन के सम्बन्ध में व्यवस्थापक परिषद् हस्तक्षेप नहीं कर सकती, तो भी उनके यात्रा-खर्च में कुछ किफ़ायत की जा सकती है। मिनिस्टरों का वेतन भी कम किया जा सकता है। संयुक्त प्रांत के मंत्रियों ने गत जनवरी सन् १९२३ ई० से अपनी इच्छा से केवल चार हज़ार रुपया लेना स्वीकार कर लिया है, परंतु नियम से ही कम हो जाय, तो आगे किसी को अधिक दिया ही न जावे। यदि मद्रास की तरह इस प्राँत में भी कमिश्नर न रहें, तो सात लाख की बचत हो सकती है। जिलों की संख्या कम कर दी जाय तो कलेक्टर इत्यादि के वेतनों में ८।१० लाख की बचत सहज ही हो सकती है। सेक्रेटरियट और रेवन्यू बोर्ड के ख़र्च में भी किफ़ायत की बड़ी गुंजाइश है। इस प्रकार शासन व्यवस्था में लगभग २५ लाख की बचत आसानी से हो सकती है।

(१) न्याय विभाग—इस मद्द के व्यय का ब्यौरा इस प्रकार है—

हाईकोर्ट	८,१७,८००	रुपये
क़ानूनी अफ़सर	३,५५,७००	"
ऐडमिनिस्टेटर जनरल	८,०००	"
जूडिशल कमिश्नर	२,३२,१००	"
दीवानी और सेशन कोर्ट; जिला और सेशन जज, सबार्डिनेट जज, मुंसिफ, मुहाफ़िज़ दफ़र और अन्य कर्मचारी	५१,११,६००	"
अदालत ख़फ़ीफा	१,२२,१००	"
फ़ौजदारी अदालतें	१२,२००	"
प्लीडरों की परीक्षा	१५,०००	"
योग	६६,७४,५००	रुपये

पंचायतों की स्थापना से इस मद्द में बड़ी बचत हो सकती है। उसके लिये उद्योग होना चाहिये।

(४) **जेल विभाग**—इस मद्द के व्यय का ब्यौरा इस प्रकार है—

(अ) जेल प्रबन्ध—

इन्स्पेक्टर जनरल और उन का दफ़्तर आदि	५८,७४७	रुपये
सेन्टरल जेल	१०,७६,८२६	”
ज़िला जेल	१७,३१,८१३	”
हवालात	१,५३,४७६	”
पुलिस	३७,७००	”
जरायम पेशा जातियों के सुधारार्थ	७६,४००	”
कैदियों के जेल से छूटने पर, उनके निर्वाहार्थ	१,५००	”
घटाओ विविध	५६५	”
योग	३१,३८,६००	”

(आ) जेलों का सामान—

जेल के कारखानों में नौकर कलर्क, यान्त्रिक	४,८२४	रुपये
कच्चा सामान	३,०३,०००	”
तार व डाक व्यय और अन्य आकस्मिक व्यय	२४,०००	”
घटाओ विविध	२४	”
योग	३,३१,८००	”
(अ) और (आ) का योग	३४,७०,७००	”

सरकार ने अनेक देश प्रेमियों को क़ैद कर के इस मद्दु का व्यय व्यर्थ में बढ़ा रखा है, उनको मुक्त करने से बड़ी बचत हो सकती है।

(५) **पुलिस विभाग**—इस मद्द का व्यौरा इस प्रकार है—

क—इन्स्पेक्टर जनरल, डिप्टी इन्स्पेक्टर जनरल, इत्यादि बड़े बड़े अफ़सरों का वेतन और आफ़िस खर्च	२.७० लाख रुपये
ख—खूफ़िया (सी० आई० डी०) विभाग	३.१४ " "
ग—ज़िला सुपरिन्टेंडेंट, उनके मातहत अफ़सर, पुलिस के सिपाही इत्यादि का वेतन और आफ़िस खर्च	१३२.५० " "
घ—गांवों की पुलिस	२४.५० " "
ङ—रेलवे पुलिस	८.२२ " "
योग	१७१.०६ लाख रुपये

सरकार और जनता का पारस्परिक सम्बन्ध संतोषप्रद नहीं है। सरकार जनता पर संदेह करती है, इसीसे उसका पुलिस का और ख़ास कर खूफ़िया विभाग का व्यय इतना बढ़ा हुआ है। खूफ़िया विभाग में ८ अफ़सर हैं, जिनका मासिक वेतन, २५० से ११५० रु० तक है; ६७ इन्स्पेक्टर और सब-इन्स्पेक्टर हैं, जिनका वेतन ७० से ३०० रु० तक है; ५६ हैड-कान्स्टे-

वल और कान्स्टेवल हैं, जिनका वेतन १३ से ३५ रु० तक है। पुलिस की मद्द में सब से अधिक खर्च ज़िला पुलिस का है। यदि जिलों की संख्या कम कर दी जाय तो ज़िला सुपरिन्टेंडेंट और उनके मातहत अफ़सरों की संख्या घट सके, और १०-१५ लाख रुपयों की किफ़ायत आसानी से हो सके। संयुक्त प्रान्त में पुलिस इन्स्पेक्टरों और सब-इन्स्पेक्टरों की संख्या लगभग २१५७० है और सिपाहियों (कान्स्टेबलों) की संख्या लगभग ३३,२०० है, अर्थात् प्रति बीस हजार मनुष्यों के पीछे एक इन्स्पेक्टर और १५ कान्स्टेबल हैं। शीघ्र ही इस बात को जांच होनी चाहिये कि इनकी संख्या कहां तक कम हो सकती है। गांवों की पुलिस के खर्च के सम्बन्ध में किफ़ायत की ज़्यादा गुञ्जाइश मालूम नहीं होती, उसका अधिकांश चौकीदारों का का वेतन ही है, जो बहुधा बहुत कम होता है। यदि सरकार प्रजा को सन्तुष्ट रख सके तो उसे पुलिस के बल की, (एवं इस विभाग के लिये खर्च की) आवश्यकता बहुत कम रह जाय।

(६) मालगुज़ारी—इस मद्द का ब्यौरा इस प्रकार है —

व्यवस्था सम्बन्धी खर्च	५,३०,४०० रु०
सरकारी इस्टेट का प्रबन्ध; मैनेजर, फारेस्ट (जंगल) अफ़सर, बन्दोबस्त अफ़सर, नौकर, क्लर्क आदि कर्मचारी, मकान, पशु चिकित्सादि	४,२१,२०० ”
मालगुजारी वसूल करने में खर्च	५,२०० ”
पैमायश और बन्दोबस्त	१,५२,८०० ”
ज़मीन सम्बन्धी काग़ज़ात; डिप्टी डायरेक्टर और अन्य अफ़सर, ट्रेनिंग स्कूल, कानूंगो-इन्स्पेक्टर, कानूंगो, पटवारी और सहायक कार्यकर्ता, भत्ता आदि	६४,२५,६०० ”
क्षतिपूर्ति, पेन्शन या भत्ता	३,०६,६०० ”
योग	७८,४२,१०० रु०

पटवारियों और कानूनगोओं के काम को देखते हुए हम उनकी वेतन या संख्या कम करने की गुञ्जायश नहीं समझते, हां, ऊँचे अफ़सरों की वेतनादि में कुछ किफ़ायत की जाय तो अच्छा है ।

(७) शिक्षा—इस मद्द का व्यौरा इस प्रकार है—

क—विश्व विद्यालय और कालिज	२८.४३ लाख रुपये
ख—सेकेंडरी हाई स्कूल	४०.६४ "
ग—प्रारम्भिक शिक्षा	५०.४० "
घ—अन्य खास खास स्कूल	४.७१ "
ङ—डायरेक्टर, इन्स्पेक्टर इत्यादि का वेतन और आफ़िस खर्च	१४.२५ "
च—छात्रवृत्ति आदि	२.५५ "
योग	१४०.६८ लाख रुपये

बम्बई प्रान्त में शिक्षा प्रचार सम्बन्धी विशेष उद्योग हो रहा है, परन्तु सभी प्रान्तों में इस की बड़ी आवश्यकता है। संयुक्त प्रान्तीय सरकार ने उन म्युनिसिपैलटियों को शिक्षा सम्बन्धी व्यय का दो-तिहाई रुपया देना स्वीकार किया है, जो अपने क्षेत्र में प्रारम्भिक शिक्षा निश्शुल्क और अनिवार्य करें, परन्तु प्रायः म्युनिसिपैलिटियों की आय के साधन इतने कम और उनकी अन्य ज़रूरतें इतनी अधिक हैं कि वे शिक्षा का एक तिहाई खर्च अपने ऊपर नहीं ले सकतीं। यही कारण है कि बहुत कम म्युनिसिपैलिटियों ने अपनी हद में प्रारम्भिक शिक्षा अनिवार्य और निश्शुल्क करने का प्रबन्ध किया है। ज़िला बोर्डों की हालत तो और भी ख़राब है, ग्रामों में शिक्षा प्रचार की ओर बहुत ही कम ध्यान दिया जाता है, सम्भवतः

एक भी ग्राम में अभी शिक्षा अनिवार्य नहीं की गयी है। यदि यह महत्व पूर्ण कार्य इसी प्रकार चला तो यथेष्ट शिक्षा प्रचार के लिये सैकड़ों वर्ष लग जांयगे। इस लिये प्रान्तीय सरकार को शीघ्र ही ग्रामों में शिक्षा अनिवार्य किये जाने का प्रबन्ध करना चाहिये।

प्रान्तीय सरकारों को अपने क्षेत्र में शिक्षा प्रचार करने के लिये बड़ौदा का आदर्श अपने सन्मुख रखना चाहिये। बड़ौदा राज्य की मनुष्य संख्या २० लाख ३३ हजार है और वहां प्रारम्भिक शिक्षा के लिये सरकार द्वारा १२ लाख रुपये खर्च किये जाते हैं। संयुक्त प्रान्त की मनुष्य संख्या ४ करोड़ ६५ लाख हैं, इस लिये यदि इस प्रान्त की सरकार प्रत्येक आदमी पर उतना खर्च करे, जितना बड़ौदा राज्य करता है तो उसे पौने तीन करोड़ रुपये खर्च करना चाहिये, परन्तु सन् १९२२--२३ ई० में केवल ५० लाख ४० हजार रुपये की मंजूरी दी गयी है। जब सरकार इस काम के लिये इससे पांच गुना रुपया खर्च करेगी, तब यहां बड़ौदा के समान प्रारम्भिक शिक्षा अनिवार्य और निश्शुल्क हो सकेगी। हमारी समझ में सब से उत्तम विधि यह है कि सरकार प्रत्येक जिला-बोर्डों को ज़िले की मालगुज़ारी का तीसरा भाग शिक्षा प्रचार और अन्य कार्यों के लिये दे दिया करे। इस धन में से वे अनायास ही अपने अपने जिले में शिक्षा को अनिवार्य और निश्शुल्क कर सकेंगे। ज़िला बोर्डों को स्वयं भी शिक्षा प्रचार की ओर उचित ध्यान देना चाहिये।

गत कुछ वर्षों में सरकार द्वारा इनको शालायें इत्यादि बनाने के लिये आर्थिक सहायता के रूप में जो रक़में दी गयी थीं, उनमें से १६ लाख रुपयों का इन्होंने उपयोग ही नहीं किया, इस लिये यह रक़म वापिस लेली गयी।

दूसरे विभागों की तरह इस विभाग में भी ऊँचे ऊँचे अधिकारियों के वेतन और बाहरी टीप टाप के ख़र्च में बहुत कमी करने की ज़रूरत है। सर्व साधारण को चाहिये कि सरकार का अधिक आश्रय न देख राष्ट्रीय शिक्षा संस्थाएं स्थापित करने का अधिकाधिक उद्योग करें।

(८) चिकित्सा और स्वास्थ रक्षा—इस मद्द का ब्यौरा इस प्रकार है—

(अ) चिकित्सा

कार्यालय व्यय; सुपरिन्टेंडैंट, जिला-चिकित्सा-अफ़सर; और अन्य कर्मचारी	१२,६३,८०० रु०
अस्पताल और शफ़ाख़ाने; सामान, मकान किराया, विविध कर्मचारियों का वेतन और भत्ता आदि, रोगियों के वस्त्र और भोजन	७,८०,५०० "
चिकित्सार्थ सहायता; दाइयों, सेवा समिति, आयुर्वेदिक कालिज आदि को	१,५५,५०० "
मैडिकल स्कूल और कालिज	१,८६,१०० "
पागल ख़ाना	२,४४,१०० "
रसायनिक परीक्षक	४६,४०० "
योग	२७,०६,४०० "

(आ) स्वास्थ

कार्यालय व्यय, वेतन भत्ता और सामान आदि।	३,१५,५०० रु०
स्वास्थ के लिये सहायता; जिला बोर्डों और अन्य संस्थाओं को, यात्रा के स्थानों को, नगरों या देहातों में स्वास्थ की उन्नति के लिये।	७,०७,१०० ”
प्लेग, मेलेरिया और छूत की बीमारियों में।	३,६५,००० ”
योग	१३,८७,६०० ”
(अ) और (आ) का योग	४०,६४,००० ”

गांवों और शहरों के रोगियों की संख्या और अवस्था देखते हुए इस विभाग में खर्च बहुत कम होता है। इसके बढ़ाये जाने की बड़ी ज़रूरत है। इससे हमारा यह अभिप्रायः नहीं हैं कि सिर्फ़ डाक्टर लोग ही अधिक संख्या में नियुक्त किये जांय और अस्पतालों तथा शफ़ाखानों का ही संख्या बढ़ायी जाय। वैद्यों और हकीमों की भी यथेष्ट नियुक्ति की जानी चाहिये। गरीब आदमियों को मुफ़्त दवाई देने के लिये काफ़ी औषधालय खुलने चाहियें। सेवा समितियों को सहायता देकर, उनसे भी बहुत काम कराया जा सकता

है। देहातों में तो जनता के स्वास्थ रक्षा के प्रबन्ध की बहुत ही कमी है। सरकारी और गैर-सरकारी सभी प्रयत्नों की आवश्यकता है।

(८) कृषि—इस मद्द का व्यौरा इस प्रकार है—

(अ) कृषि

निरीक्षण	६१,१८८ रु०
अधीन कर्मचारी	२,६५,०८१ "
पशु पालन	७८,१५६ "
कृषि प्रयोग	६०,१०० "
कृषि ऐंजिनियरिंग	३,६४,७४६ "
कृषि कालिज और अन्वेशन शाला	३,४५,४६२ "
अन्य निरीक्षक कर्मचारी	२,३६,६४१ "
कृषि फ़ार्म	२,७६,८२८ "
नुमायश और मेले	३१,५०० "
वनस्पति शाला	८६,२२८ "
ज़िलों के, और अन्य बाग़	२,४१,१६६ "
कृषि स्कूल	७६,६०० "
योग	२१,६३,३५६ "

(आ) पशु सम्बन्धी व्यय

निरीक्षण	१,७२,६४७ रु०
नुमायश या मेलों में इनाम	२,००० ”
अस्पताल और शफाखाने	५,४०० ”
पशु पालन क्रिया	८६,६६८ ”
अधीन कर्मचारी	१,४३,२८५ ”
योग	४,१३,३०० ”

(इ) सहकारी साख

रजिस्ट्रार, डिप्टी और सहायक	५४,६६० रु०
जुनियर, सहायक रजिस्ट्रार, कलार्क और नौकर, तथा हिसाब की जांच	१,०६,०८२ ”
सफ़र का भत्ता	४०,००० ”
आकस्मिक व्यय; छोटे नौकरों का वेतन, टाइप राइटर, किताब, कपड़े, आदि	१४,७०० ”
घटाओ—निरीक्षण व्यय जो मिश्रित पूंजी की कंपनियों से लिया जाय और वह रक़म जो हिसाब की जांच से प्राप्त हो	२६,५४२ ”
योग	१,६२,२०० ”
(अ), (आ) और (इ) का योग	२७,६८,८५६ ”

जिन किसानों से सरकार प्रतिवर्ष लगभग ७ करोड़ रुपया मालगुज़ारी वसूल करती है, उनकी भलाई के लिये केवल २८ लाख रुपये खर्च किया जाना खेद का विषय है। किसान ही देश के अन्नदाता हैं, अतः इस मद्द में कम से कम तिगुना तो व्यय होना चाहिये।

पशुओं के सम्बन्ध में इस समय केवल चार लाख रुपये व्यय करके प्रान्तीय सरकार संतुष्ट हो जाती है, ऐसा न होना चाहिये, इस मद्द में खर्च बढ़ाना चाहिये। पशु चिकित्सा विभाग को स्थापित हुए कई वर्ष हो गये, तो भी अभी तक अनेक गांवों में पशुओं की चिकित्सा का उचित प्रबन्ध करना बाकी है। सहकारिता के लाभ अब जनता को प्रकट हो गये हैं, इस कार्य को भी बहुत बढ़ाने की ज़रूरत है। कृषि विभाग के प्रयत्नों पर ही किसानों की, और इस लिये अधिकांश देश की उन्नति निर्भर है। देश में प्रतिवर्ष अनाज की भयंकर कमी रहती है। यदि कृषि विभाग के अफ़सर गांवों में जाकर अपनी देख रेख में किसानों को नये तरीक़ों से खेती करने को उत्साहित करें, और उत्तम बीज आदि की सहायता दें तो देश में अन्न की उपज सहज ही बढ़ सकती है। निस्संदेह इस काम के लिये कृषि विभाग के अफ़सर देश प्रेमी एवं अनुभवी होने चाहियें।

(१०) **उद्योग धन्धे**—इस मद्द का ब्यौरा इस प्रकार है —

निरीक्षण	१,७२,४०१ रु०
उद्योगों को सहायता	...
कानपुर की अन्वेशन संस्था	१,५६,७६० ,,
उद्योग और शिल्प संस्थायें	५,४१,३६१ ,,
पीतल का तार बनाना	४३५ ,,
औद्योगिक बोर्ड की इच्छा से खर्च होने के लिये	१५,००० ,,
विविध	८०७ ,,
योग	८,८६,७६४ रु०

इस विभाग में भी खर्च बहुत कम होता है, उद्योग धन्धों को प्रोत्साहन देने के लिये इतने बड़े प्रान्त में कमसेकम ५० लाख रुपये प्रतिवर्ष खर्च होने की व्यवस्था तो तुरन्त ही हो जानी चाहिये ।

(११) **जंगल विभाग**—इस मद्द का ब्यौरा इस प्रकार है—

संचालन व्यय ; चीफ कंजरवेटर, कलर्क, नौकर, डेरे आदि का व्यय	१,४४,६०० रु०
जंगलों की रक्षा, उन्नति और विस्तार; पशु, स्टोर, औज़ार, पुल आदि, जंगल से लकड़ी और दूसरी पैदावार लाने का खर्च	५६,८५,१३५ „
अफसर, नौकर, क्लर्क आदि का वेतन, आकास्मिक व्यय आदि, कार्य्यालय व्यय	१८,८२,६८० „
योग	७७,१३,८१५ रु०

अन्य विभागों की भांति इस में भी बड़े बड़े अफसरों की वेतन और संख्या कम करने से बचत हो सकती है।

(१२) सिविल निम्मर्माण कार्य—इस मद्द का व्यौरा इस प्रकार है:—

नयी इमारतों का खर्च	१६.६७ लाख	रु०
नयी सड़कों का खर्च	४.५८	„
सड़कों और इमारतों की दुरुस्ती का खर्च	३६.०८	„
अफ़सरों का वेतन और आफ़िस खर्च	१६.२७	„
औज़ार इत्यादि खरीदने का खर्च	१.२२	„
म्युनिसिपैलिटी, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड और और क़स्बों को इमारतों के लिये दी जाने वाली रक़म	४.६३	„
ऋण में, निम्मर्माण कार्य के लिये लगाई जाने वाली रक़म —		
स्वास्थ रक्षा के लिये निर्माण कार्य	१४.१०	„
लखनऊ यूनिवर्सिटी के लिये	३.५०	„
अन्य इमारतें पुल आदि	३०.२३	„
योग	१२७.२८	रु०

इस विभाग में बहुधा अच्छा इमानदारी का काम नहीं होता। यथेष्ठ सावधानी बर्तने से बड़ी बचत हो सकती है, और उस बचत में कुछ और रुपया मिला कर डिस्ट्रिक्ट बोर्डों की वे नई सड़कें बनवाई जा सकती हैं, जिनकी व्यपार अथवा

आमदोरफ़् के लिये अत्यंत आवश्यकता है और जो केवल धनाभव के कारण नहीं बनवाई जा सकतीं।

(१३) आबपाशी—इस विभाग के लिये सन् १९२२—२३ ई० में असल में १ करोड़ ९२ लाख रुपये खर्च किये जाने की मंजूरी दी गयी है, परन्तु पहिले दिये हुए, संयुक्त प्रान्त के खर्च के नक्शे में केवल १ करोड़ ३७ लाख का ही उल्लेख है। इसका कारण यह है कि नक्शें मे दिये हुए खर्च में ५५ लाख रुपये की वह रक़म शामिल नहीं है जो पुरानी नहरों का काम चालू रखने के लिये ख़र्च होगी। यह रकम इन नहरों की आमदनी में से ख़र्च की जायगी। इन नहरों की आमदनी १ करोड़ ४५ लाख रु० थी, इसमें से ५५ लाख रुपये की रकम ख़र्च में दिखादी जाने के कारण, आमदनी सिर्फ़ ९० करोड़ बतलायी गयी है।

खर्च का ब्यौरा नीचे लिखे अनुसार है—

१—पुरानी नहरों के चालू रखने का खर्च	५५ लाख रुपये
२—नहरों में लगी हुई पूंजी का ब्याज	४८ ,, ,,
३—नयी नहरों पर खर्च	८९ ,, ,,
योग	५९५ लाख रुपये

सरकार नहरों का काम क्रमशः बढ़ा रही है, यह अच्छी बात है, इससे किसानों को लाभ होता है और सरकार को भी बड़ी आमदनी होती है। इस कार्य के बराबर बढ़ते रहने की अभी बहुत ज़रूरत है।

सन् १९२२ ई० में प्रान्तीय सरकार को पुरानी नहरों से, सब प्रकार का खर्च और पूंजी का व्याज निकाल कर लगभग ४८ लाख रुपए का नफ़ा हुआ था। सन् १९२२—२३ ई० में नयी नहरों पर जो ८९ लाख रुपये खर्च किये जांयगे उसमें से ८० लाख रुपये कर्ज़ लेकर ख़र्च किये जांयगे; शेष नफ़े में से। चाहिये यह था, कि गत वर्ष इस विभाग से जो ४८ लाख रुपये का नफ़ा हुआ था, वह सब नयी नहरों के बनवाने में ख़र्च किया जाता। क्या सरकार आगे इस बात का ध्यान रखेगी।

१४--आबकारी, स्टाम्प, रजिस्टरी आदि—इस मद्द में भी किफ़ायत की गुंजायश है। आबकारी के व्यय का ब्यौरा इस प्रकार था—

निरीक्षण	१,७५,८००	रुपया
ज़िले के प्रबन्ध कर्ताओं का आफ़िस ख़र्च	२६,२००	"
शराब बनाना आदि	४,२५,७००	"
क्षति पूर्ति	१०,०००	"
योग	६,४०,७००	"

स्टाम्प के व्यय का व्यौरा इस प्रकार था—

ग़ैर अदालती; निरीक्षण, स्टाम्प की बिक्री का ख़र्च, केन्द्रीय स्टोर से लिये गये स्टाम्प	१,३३,६००	रुपया
अदालती; निरीक्षण, स्टाम्प की बिक्री, केन्द्रीय स्टोर से लिये गये स्टाम्प और सादा काग़ज़	१,९६,६००	"
योग	३,३०,२००	"

रजिस्टरी की मद्द का व्यौरा इस प्रकार था—

निरीक्षण; इन्सपेक्टर, क्लर्क और नौकर टाइप राइटर आदि।	२१,५५०	रुपया
जिलों का खर्च; सब-रजिस्ट्रार क्लर्क, नौकर, सामान, टाइप राइटर आदि	४,४८,४५०	"
योग	४,७०,०००	"

१५--मुद्रा, टकसाल और विनिमय—इस मद्द में अधिकांश विनिमय का ही खर्च है। विदेशी हिसाब के लिये रुपया दो शिलिंग का माना गया है, परन्तु असल में एक रुपये के विनिमय में लगभग एक शिलिंग और चार पैंस ही मिलते हैं। इससे प्रान्तों को जो हानि होती है, वह इस मद्द में डाली जाती है।

१६--स्टेशनरी और छापाखाना--सन् १६२२-२३ ई० के अनुमानित व्यय में इस का व्यौरा इस प्रकार था--

सरकारी और जेल के प्रेस के सुप-रिन्टेन्डेन्ट और अन्य कर्मचारियों का वेतन और अलाउंस, प्रेस की मशीनें और सामान, गोदाम, जिल्द बंधाई, टाइप ढालना आदि २	६,४०,६००	रुपया
स्टेशनरी, जो केन्द्रीय स्टोर से ली गयी	७,७०,०००	"
कमी	१;००,०००	"
योग	१३,१०,६००	"

अन्यमद्--(१७) प्रान्तीय ऋण की मात्रा यथाशक्ति कम होनी चाहिये इस लिये शासन प्रबन्ध का ख़र्च कम करना चाहिये। शासन व्यय को यथाशक्ति कम करने पर भी यदि उत्पादक कार्यों के लिये ऋण की आवश्यकता हो तो ले लिया जाय। सूद का बोझ वृथा न बढ़ाया जाना चाहिये।

(१८) अकाल निवारण की मद् के सम्बन्ध, में राजस्व व्यवस्था के परिच्छेद में कह आये हैं। जनता के लिये आजीविका के यथेष्ट साधनों और धन--वृद्धि की व्यवस्था हो तो अकाल वैसे भयंकर और विस्तृत न हो। इस ओर यथेष्ट ध्यान देना चाहिये।

(१६) जिन अधिकारियों को वेतन ही बहुत अधिक मिलता है, पेंशन उन्हें न दे कर, कम वेतन वालों को विशेष रूप से मिलनी चाहिये।

(२०) कंटिंजैंसी फंड इस लिये रखा जाता है कि कोई आकस्मिक या असाधारण आवश्यकता आ पड़े तो इस मद्द से काम चलाया जा सके।

(२१) सन् १९२२-२३ ई० में जो ८८ लाख रुपये कर्ज़ दिये जाने का प्रबन्ध किया गया है, उस में से २५ लाख रुपये तो भारत सरकार को प्रान्तीय आबपाशी सम्बन्धी कर्ज़ की इस वर्ष की किश्त अदा करने की गरज़ से दिये जांयगे और ६३ लाख रुपये स्थानीय संस्थाओं और किसानों को कर्ज़ दिये जाने के लिये अलग रखे गये हैं।

पाठक अब समझ गये होंगे कि प्रान्तीय सरकार जिन जिन मद्दों पर खर्च करती है, उन में किस किस में किफ़ायत या किस किस में वृद्धि करने से जनता का अधिक हित साधन होगा।

व्यवस्थापक परिषद् का अधिकार—संयुक्त प्रान्त के सन् १९२२-२३ ई० के निमित्त प्रस्तावित १५ करोड़ ४१ लाख रुपयों के कुल खर्च में से ४ करोड़ ८० लाख रुपयों के खर्च पर प्रान्तीय व्यवस्थापक परिषद् को मंजूरी देने का अधिकार नहीं था। उसकी मजूरी १० करोड़ ६१ लाख रुपये के ख़र्च के लिये

ली गई थी, उस में से केवल ३ करोड़ २७ लाख रु० हस्तान्तरित विषयों के लिये हैं; शेष सब रक्षित विषयों के लिये। हस्तान्तरित विभागों में भी लगभग २४ लाख रुपयों का ऐसा ख़र्च था, जिस पर व्यवस्थापक सभा को मंजूरी देने का अधिकार नहीं था। इस प्रकार यद्यपि प्रांतिक व्यवस्थापक परिषद् को ख़र्च की अधिकांश मद्दों पर मंजूरी देने का अधिकार दे दिया गया है पर वास्तव में वह प्रान्त के सम्पूर्ण ख़र्च के एक चौथाई से भी कम पर अधिकार रखती है। जैसा कि हम पहिले कह चुके हैं व्यवस्था परिषद् को, प्रान्त की पूरी आमदनी अपनी इच्छानुसार व्यय करने का अधिकार होना चाहिये।

प्रान्तीय आय

प्रान्तों का तुलनात्मक व्यय—आगे दिए हुए नक्शों से भिन्न भिन्न प्रान्तों की पृथक् पृथक् मद्दों की तुलनात्मक आय और संयुक्त प्रान्त की पृथक् रूप से आय अच्छी तरह मालूम हो जायगी।

अनुमानित आय [१९२२-२३]; लाख रुपयों में

मद्द	बम्बई	मद्रास	बंगाल	संयुक्त प्रान्त	पंजाब	बर्मा	बिहार उड़ीसा	मध्यप्रान्त बरार	आसाम	जोड़
आय कर	३	५	...	२	२	५	३	१	...	२१
माल गुज़ारी	५९७	६४१	३०९	६८४	३१२	५३०	१६४	२५१	९८	३५८६
आबकारी	३७१	४८३	१९०	१६९	१०१	१०२	१२५	१४०	६४	१७४५
स्टाम्प	२३०	२५८	३७५	१९३	८३	५४	९०	५०	१९	१३५२
जङ्गल	८९	५४	२१	११६	५४	२२५	१०	४९	१५	६३३
रजिस्टरी	१४	३८	२६	१४	७	६	९	७	१	१२२
आबपाशी	२५	८६	...	९२	३२७	२४	१४	...	...	५६८
सूद	७६	९	४	१६	४	४	...	६	...	११९

न्याय, जेल, पुलिस, बन्दगाह	१९	२६	३४	१६	१५	१८	१४	५	३	१५०
शिक्षा	९	६	१०	८	७	३	१	२	...	४६
स्वास्थऔर चिकित्सा	६	३	७	२	३	२	५	१	१	३०
कृषि	३	४	३	५	८	१	...	३	...	२७
उद्योग धंधे आदि	१	१५	१४	...	...	...	१	१५	...	४६
सिविलनिर्माण कार्य	७	५	९	४	५	७	६	४	२	४९
पेन्शन आदि	९	३	५	४	७	१	३	४	...	३६
स्टेशनरी छपाई	२	२	४	४	१	१	१	१	...	१६
विविध	२	१	३२	५	२७	१	१	१	...	७०
योग	१४६३	१६३९	१०४३	१३३४	९६३	९८४	४४७	५४०	२०३	८६१६

संयुक्त प्रान्त की आय; लाख रुपयों में

मद्द	१९२०—२१ का हिसाब	१९२२-२३ का अनुमान
(१) आय कर	३२.२	२.४
(२) मालगुजारी	६८२.४	६८३.६
(३) आबकारी	१७६.१	१६६.०
(४) स्टाम्प	१४७.३	१६३.२
(५) जङ्गल	८७.५	११५.५
(६) रजिस्टरी	१२.६	१३ ६
(७) रेल	.६	.६
(८) आबपाशी	१०३.३	६०.६
(९) सूद	१८.६	१५.७
(१०) न्याय विभाग	८.५	९.०
(११) जेल	६.०	५१
(१२) पुलिस	१.६	१.७

मद्द	१६२०—२१ का हिसाब	१६२२-२३ का अनुमान
(१३) शिक्षा	१७.५	८.५
(१४) चिकित्सा और स्वास्थ्य	१.४	१.५
(१५) कृषि	२.७	४.८
(१६) उद्योग धंधे	.१	.३
(१७) विविध विभाग	.१	.४
(१८) सिविल निर्माण कार्य	४.६	४.२
(१६) कागज़ कलम और छपाई	१.६	३.७
(२०) पेन्शन आदि के लिये सहायता	३.०	४.१
(२१) विविध	३.४	४.६
योग	१३१५.०	१३३३.४

संयुक्त प्रान्त का उदाहरण—प्रान्तीय आय का विषय एक उदाहरण द्वारा अच्छी तरह समझ में आजायगा, इस लिये संयुक्त प्रान्त की आय का सन् १९२०-२१ ई० का हिसाब और सन् १९२२-२३ ई० का अनुमान पृथक् रूप से दिया गया है।

मद्दों का ब्यौरा और आलोचना—अब हम संयुक्त प्रान्त की सन् १९२२—२३ ई० की अनुमानित आय की प्रत्येक मद्द का कुछ विस्तृत ब्यौरा देंगे और साथ ही यह भी बतायेंगे कि प्रान्तों में किस किस मद्द की आय बढ सकती है, एवं किस मद्द की आय घटनी चाहिये।

१—आय-कर—ऐसा नियम किया गया है कि यह आय भारत-सरकार की हो परन्तु इसे वसूल करने का काम प्रान्तीय सरकार करें। कर की आमदनी पर तीन पाई फ़ी रुपया उन्हें मिलेगा, परन्तु यह निश्चय किया गया है कि प्रत्येक प्रान्तीय सरकार सन् १९२०-२१ ई० की इस मद्द की आमदनी के बराबर एक निश्चित रक़म भारत-सरकार को प्रति वर्ष दिया करे। इस प्रकार आरंभ में प्रान्तीय सरकारों को आयकर की आदमी में से जो कुछ हिस्सा मिलेगा, वह उन्हें भारत-सरकार को दे देना होगा, परन्तु देने की रक़म भविष्य में वही बने रहने से, जब कर की आमदनी बढ़ेगी तो प्रान्तीय सरकारों को मिलने वाला हिस्सा भी बढ़ेगा।

इस प्रकार आय-कर वसूल करने का काम प्रान्तीय सरकारों के ऊपर छोड़ा गया है, और उन्हें इसके सम्बन्ध में कुछ आय होती है। बेहतर है कि यह कुल आय प्रान्तों को ही दे दी जाय, जिससे उन्हें अपनी उन्नति की यथेष्ट सुविधा हो।

२—**मालगुज़ारी**—इस मद्द का ब्यौरा यह है—

साधारण मालगुज़ारी	६,६३,४७,००० रु०
सरकारी स्टेट की बिक्री	२,००० ”
मालगुज़ारी की माफी और परती ज़मीन की बिक्री	१,००० ”
ज़मीन का महसूल व अबवाब	२,६८,३०० ”
विविध आय	१०,२४,५०० ”
योग	७,०६,४२,८०० ”
घटाओ—आबपाशी के कारण जो मालगुज़ारी मिली, (वह आबपाशी में शामिल की गयी)	२२,०५,००० ”
शेष	६,८४,३७,८०० ”
घटाओ—वापसी	४४,८०० ”
शेष	६,८३,९३,००० रु०

साधारण मालगुज़ारी सर्वसाधारणसे प्राप्त मालगुजारी के अतिरिक्त, गत वर्षों की बक़ाया की आमदनी, सरकारी स्टेट की मालगुज़ारी और जंगल की स्टेट की मालगुजारी शामिल होती है।

विविध आय में मुख्य आमदनी, यह होती है—मालगुज़ारी के दफतर की आमदनी, मालगुज़ारी-अदालतों से किया हुआ जुर्माना, कुछ जगहों में ख़ास पटवारी रखने के उपलक्ष्य में होने वाली आमदनी, दीवानी, मुकदमों से होने वाली आमदनी, खेतों की हद ठीक करने के लिये अमीनों की फीस, उन जंगलों या जमीनों से खनिज पदार्थों की आय जो जंगल विभाग के प्रबन्ध में न हों इत्यादि।

प्रान्तीय सरकारों की आमदनी का मुख्य साधन मालगु-ज़ारी है, बहुधा उन की कुल आय का आधा भाग इसी से प्राप्त होता है। जैसा कि पहिले कहा गया है, भारतवर्ष में सरकार अपने आपको ज़मीन का मालिक समझती है। इस आधार पर वह, अस्थायी बन्दोबस्त वाले प्रान्तों के किसानों से, ज़मीन से होने वाली आय का ५० फीसदी या कहीं कहीं इससे भी अधिक हिस्सा, मालगुजारी के रूप में वसूल करती है। यदि एक राष्ट्रीय सरकार ऐसा करे तो शायद कुछ जायज भी समझा जाय परन्तु विदेशी सरकार का ऐसा सम-झना कदापि ठीक नहीं।

सरकार जो मालगुजारी लेती है, वह उपज के रूप में नहीं, वरन् रूप के रूप में लेती है वह उसकी शरह पैदावार का परता लगा कर नियत करती है, यह

परता बन्दोबस्त के साल का लगाया हुआ होता है। बहुधा ऐसा हो सकता है कि बन्दोबस्त के साल फसल अच्छी हो, अथवा 'कारगुज़ारी' दिखाने वाले अफ़सर उसके अनुमान में अत्युक्ति कर दें, और अभागे किसानों पर कितने ही वर्षों के लिये सरकारी मालगुज़ारी का भार बढ़ जाय। अति बृष्टि, अनाबृष्टि आदि से फ़सल ख़राब हो जाने पर जब पैदावार कम हो जाती है, तब भी सरकारी माल-गुज़ारी प्रायः पूर्व निश्चय अनुसार ही देनी पड़ती है। कभी कभी सरकार 'दया' करके मालगुज़ारी का कुछ अंश छोड़ भी देती है, परन्तु वह छूट नुक़सान के हिसाब से बहुधा कम होती है।

मालगुजारी को अधिकता के कारण अधिकांश भारतीय कृषकों की, जो भारतीय जनता का बृहदंश हैं, इस समय बुरी दशा है। उनका यथेष्ट उद्धार उसी समय होगा, जब उनकी ज़मीन उनकी ही मौरूसी जायदाद समझी जायगी, और सर-कारी मालगुज़ारी न्याय पूर्वक निश्चित कर दी जायगी। हमारी समझ से, जिस दर से अन्य आय पर कर लिया जाता है, उसी दर से ज़मीन की आमदनी पर कर लगना चाहिये।

सरकार का ध्यान इस मुख्य बात की ओर न होकर कुछ साधारण बातों—सहकारी बैंक खोलने, तकावी देने, आबपाशी बढ़ाने की ओर क्रमशः आकर्षित हो रहा है। विविध प्रांतों में ऐसे क़ानून भी बनाए गए हैं कि ज़मींदार किसानों से मनमाना

लगान लेकर उन्हें सता न सकें। सन् १८८१ और १६०७ ई० के टिनैंसी ऐक्ट् के पास होजाने के कारण किसानों को वेदख़ली का विशेष भय न रहने से यह भरोसा रहता है कि अब खेती की उन्नति करने से लाभ की जो वृद्धि होगी, वह सब ज़मींदार को नहीं मिल जावेगी, वरन् उसके एक बड़े भाग के अधिकारी स्वयं वे किसान ही होंगे।

३---आबकारी—इस मद्द का ब्यौरा यह है—

लाइसैंस, डिस्टिलरी फ़ीस शराब और अन्य मादक पदार्थों की बिक्री पर महसूल	१,५७,६६,००० रु०
आबकारी विभाग की अफ़ीम की बिक्री से लाभ	१२,२१,००० "
जुर्माना, ज़ब्ती, और अन्य आय	५०,००० "
योग	१,७०,४०,००० "
घटाओ—वापसी	१,४०,००० "
शेष	१,६६,००,००० "

शोक की बात है कि इस मद्द की आय की उत्तरोत्तर वृद्धि होती जा रही है। भारतीय व्यवस्थापक सभा में इस आशय का प्रस्ताव किया गया था कि सरकार मादक द्रव्यों के सेवन को न बढ़ने देने की नीति रखे। यह प्रस्ताव स्वीकृत नहीं हुआ। शराब की दुकानों पर पहरा देने वालों तथा टैम्परैंस (मद्यपान-

निवारण) सभाओं के कार्य में सरकार बाधा डालती है, और उन पर तरह तरह की सख़्ती करती है। इससे स्पष्ट है कि सरकार का जैसे बने, वैसे आमदनी चाहिए मादक द्रव्यों के प्रचार को रोकने के लिये वह तैयार नहीं। इस प्रकार देश का आत्मिक पतन कब तक होता रहेगा ?

अन्यान्य विभागों में यह विभाग प्रान्तीय सरकारों के हाथ में दिया गया है, जिन्हें प्रान्तों की उन्नति के लिये रुपये की बड़ी आवश्यकता है। अतः यह आशा हो ही नहीं सकती कि प्रान्तीय सरकार इस विभाग से अधिकाधिक आमदनी प्राप्त करने, और इसलिये मादक द्रव्यों का अधिकाधिक प्रचार करने में कोई कसर रखें।

बड़ी ज़रुरत इस बात की है कि यह विभाग भारत-सरकार के ही अधीन रहे और वह मादक द्रव्यों का प्रचार घटाने की उपयुक्त नीति काम में लावे।

४---स्टाम्प—इस मद्द का व्यौरा यह है—

(अ) ग़ैर अदालती	
साधारण स्टाम्प की बिक्री	३८,३७,००० रु०
इम्प्रेसिंग (impressing) दस्तावेजों पर डयूटी	५७,००० ”
जुर्माना या सज़ा	३२,००० ”
विविध	२,००० ”
घटाओ—वापसी	९४,००० ,,
योग	३८,३४,००० रु०

(आ) अदालती

कोर्ट फीस स्टांप की बिक्री	१,५३,८६,००० रु०
कोर्ट फीस स्टांप के साथ काम में आने वाले कागज़ की विक्री	१,६६,००० रु०
घटाओ—वापसी	८६,०००
योग	१,५४,६६,००० रु०
(अ) और (आ) योग	१,६३,००,००० रु०

अदालती स्टांप प्रत्यक्ष रूप से न्याय पर कर है। ग़ैर अदालती स्टाम्प भी, कुछ परोक्ष रूप में, न्याय—कर ही है। रुपया लेने की रसीद पर, या हुंडी आदि पर स्टाम्प इस लिये ही लगाया जाता है कि यदि पीछे कोई बाद विवाद हो तो न्याय होने के अवसर पर प्रमाण तैयार रहे, इस प्रकार स्टाँप की आय जितनी अधिक होगी, उतना ही यह समझा जायगा कि प्रजा को न्याय प्राप्त करने के लिये अधिक खर्च करना पड़ा। अतः यह आय अल्पतम होनी चाहिये, जिससे न्याय सस्ते से सस्ता हो।

५---जंगल—इस आय का व्यौरा इस प्रकार है—

लकड़ी या अन्य पैदावार* जो सरकार ले	५३,३६,८०० रु०
लकड़ी या अन्य पैदावार जो उपभोक्त या ख़रीदार ले	६१,०२,१०० ”
जंगल का बे वारसी और ज़प्त किया हुआ माल	५,८०० ”
विदेशी लकड़ी या अन्य जंगल की पैदावार पर महसूल	३०,२०० ”
विविध, जुर्माना, ज़प्ती आदि	१,२१,१०० ”
घटाओ—वापसी	४५,१०० ”
योग	१,१५,५४,००० रु०

जंगल विभाग का उद्देश्य प्रजा—हित ही रहना चाहिये। आय का लक्ष्य रख कर प्रजा—हित की उपेक्षा करना कदापि उचित नहीं। इस समय अनेक स्थानों में जंगल विभाग के कारण पशुओं के लिये चरागाहों की बड़ी कमी होगई है। इससे देश की बड़ी हानि है। पुनः अब ईधन मंहगा होने के कारण उसका कुछ काम गोबर के उपलोंसे ही ले लिया जाता है। इस से खाद की कमी होती है। जंगल विभाग को इस ओर ध्यान देना चाहिये।

* जंगल की अन्य पैदावार में मुख्य बांस, घास, इंधन, कोयला, राल आदि पदार्थ होते हैं।

६---रजिस्टरी—इस मद्द का ब्यौरा यह है —

दस्तावेज़ों को रजिस्टरी कराने की फ़ीस	१०,७०,००० रु०
रजिस्टरी की हुई दस्तावेज़ों की नक़ल की फीस	८०,८०० "
विविध, फीस या जुर्माने आदि	२,३६,६०० "
घटाओ—वापसी	४०० ,,
योग	१३, ६०, ००० रु०

कागज़ों की रजिस्टरी होने से लोगों के बेईमानी करने का अवसर कम होता है। इस विभाग में एक परिमित सीमा तक की आमदनी बुरी नहीं।

७—रेल—इस मद्द में वह आय है जो शाहदरा सहारनपुर रेलवे से होने वाले मुनाफे में से सरकार को मिलती है।

८-आबपाशी—इस मद्द का ब्यौरा इस प्रकार है :—

(१) उत्पादक कार्य	
प्रत्यक्ष आय	१,१५,७७,००० रु०
मालगुज़ारी की आय जो आबपाशी के कारण हुई	२१,६७,००० रु०
घटाओ—संचालन व्यय	४७,४५,७१० रु०
वास्तविक आय	६०,२८,२६० रु०
२ अनुत्पादक कार्य	
प्रत्यक्ष आय	८,००,००० रु०
मालगुजारी की आय जो आबपाशी के कारण हुई	८,००० रु०
घटाओ—संचालन व्यय	७,७५,००० रु०
वास्तविक आय	३३,००० रु०
(१) और (२) का योग	६०,६१,२६० रु०
अन्य फुटकर कार्य	२५,००० रु०
समस्त योग	६०,८६,२६० रु०

यह कार्य बहुत बढ़ने की आवश्यकता है। कार्य बढ़ने के साथ आय का बढ़ना अनुचित नहीं। परन्तु दर नियमित रहनी चाहिये।

९-सूद—इस मद्द का व्यौरा इस प्रकार है:—

ऋण और पेशगी पर सूद	१५,७४,६०० रु०
विविध	४०० "
योग	१५,७५,००० "

ऋण, इन संस्थाओं या व्यक्तियों को दिया जाता है—ज़िला और अन्य स्थानीय कोष (Local funds) कमेटियों को, म्युनिसिपैलिटियों, जमींदारों, किसानों, सहयोग समितियों आदि को।

१०—न्याय-विभाग—इस मद्द का व्यौरा इस प्रकार है—

अनधिकृत माल की बिक्री	६०,००० "
कोर्ट फ़ीस जिसमें दीवानी अदालत के अमीन और कुड़क अमीन आदि फीस शामिल है	२,७६,२०० "
हाई कोर्ट या अधीन दीवानी अदालतों की फ़ीस, मैजिस्ट्रेटों का किया हुआ जुर्माना और ज़ब्ती आदि	५,६७,००० "
वकालत की परीक्षा-फीस	१५,००० "
विविध फीस और जुर्माने	७,१०० "
विविध	२६,७०० रु०
घटाओ—वापसी	८०,१०० "
योग	६,०५,००० रु०

जैसा कि हमने अन्यत्र कहा है, न्याय सस्ते से सस्ता होना चाहिये। देश का कानून ही इस प्रकार बदला जाना चाहिये कि मुकद्दमेबाजी कम हो, आदमी पंचायतों में ही निपटलें। अस्तु, न्याय विभाग की आय-वृद्धि हम अच्छी नहीं समझते।

११-जेल—इस मद्द का व्यौरा इस प्रकार है —

जेल	६,७०० रु०
जेलों के कारख़ानों के सामान की बिक्री	५,००,७०० ,,
घटाओ—वापसी	४०० ,,
योग	५,१०,००० रु०

१२-पुलिस—इस मद्द का व्यौरा इस प्रकार है —

सार्वजनिक विभागों, प्राइवेट कम्पनियों, और लोगों को दी गयी पुलिस	३२,००० रु०
हथियार रखने के कानून से आय	७०० ,,
मोटर आदि की रजिस्ट्री, आदि की फ़ीस, जुर्माने और जप्ती	८०,५०० ,,
पेन्शन आदि के लिये प्राप्ति	३,५०० ,,
विविध	५६,३०० ,,
घटाओ-वापसी	४,००० ,,
योग	१,६६,००० रु०

१३-शिक्षा—इस मद्द का व्यौरा इस प्रकार है —

विश्वविद्यालय	
फ़ीस ; सरकारी, आर्ट कालेज	७०,००० रु०
" सरकारी, पेशों के कालेज	४०,२०० "
माध्यमिक	
फ़ीस ; सरकारी, माध्यमिक स्कूलों, तथा छात्रालयों की आय	४,५४,६०० "
प्रारम्भिक	
फ़ीस ; सरकारी प्रारम्भिक स्कूल	८०० "
स्पेशल	
फ़ीस ; मिडिल स्कूल	२,४०० "
सुधारक स्कूलों के कारखाने	२,००० "
जनरल	
सहायता	
दान	५,५०० "
विविध; परीक्षा फ़ीस सिविल एँजिनयरिं १६,७०० "	
कालिज, किताबों, फ़ोटों, और अन्य सामान की बिक्री, प्रान्तीय परीक्षाओं की फ़ीस आदि	२,५३,२०० "
घटाओ—वापसी	४०० "
योग	८,४८,००० रु०

न्याय की भांति, शिक्षा भी जितनी सस्ती हो, उतना अच्छा है। प्रारम्भिक शिक्षा तो बिल्कुल बिना फ़ीस ही होनी चाहिये, अन्य शिक्षा की फ़ीस भी यथा सम्भव कम रहना उत्तम है। वर्तमान समय में यहां शिक्षा ऐसी मंहगी है कि सर्व साधारण की कौन कहे, मध्य श्रेणी के भी बहुत से आदमी इसका व्यय सहन नहीं कर सकते। इस लिये देश में अविद्यांधकार छाया हुआ है। इसे दूर करना चाहिये! इस लिये शिक्षा विभाग को फ़ीस द्वारा आय बढ़ाने का लक्ष्य न रखना चाहिये।

१४---चिकित्सा और स्वास्थ्य—इस मद्द का ब्योरा इस प्रकार है —

(अ) चिकित्सा

मेडिकल स्कूल और कालिज फ़ीस	२०० रु०
अस्पताल की आय	७,१०० "
पागलखानों की आय जिसमें ऐसे पागलों को रखने दोनों वाली आय भी शामिल है, जो दरिद्र न हों	१०,२०० "
म्युनिसिपैलटियों और छावनियों की सहायता, सर्वसाधारण का चन्दा, सैनिक विद्यार्थियों की शिक्षा के लिये सहायता	३०,९०० "
दान की आय	१,७०० "
विविध; रसायनिक विश्लेषण की फ़ीस आदि	६,००० "
घटाओ —— वापसी	१०० ,,
योग	५६,००० रु०

(आ) स्वास्थ

दवाइयों और टीका लगाने की चीजों की बिक्री	३२,५०० रु०
सहायता	४८,००० "
विविध	१३,५०० "
योग	६४,००० रु०
(अ) और (आ) का योग	१५०,००० रु०

१५---कृषि—इस मद्द का व्यौरा इस प्रकार है —

बागों की आय	१,३३,००० रु०
कृषि की विविध आय	१,००० "
कृषि-ऐंजिनयरिंग	१३,००० "
कृषि कालेज और प्रयोग शालायें, बीज आदि	१,७१,७०० "
सार्वजनिक नुमायश और मेले	४५,००० "
पशु चिकित्सा	१,२१,६०० "
घटाओ —— वापसी	३०० "
योग	४,८५,००० "

१६----उद्योग-धंधे—इस मद्द का व्यौरा इस प्रकार है—

औद्योगिक और शिल्पीय संस्थाओं की फीस	१७,००० रु०
कारखानों की आय	८,५०० "
विविध	५०० "
योग	२६,००० "

१७--विविध विभाग—इस मद्द का व्यौरा इस प्रकार है —

स्टीम वोयलरों के निरीक्षण की फीस	३१,७०० रु०
परीक्षा फीस	२,००० "
विविध; अजायब घर; पीतल के तार बनाने; जन्म मृत्यु और विवाहों की रजिस्टरी आदि की आय	५,३०० "
घटाओ — वापसी	१००० ,,
योग	३८,००० रु०

१८--सिविल निर्म्माण कार्य—इस मद्द का व्यौरा इस प्रकार है —

सिविल अफसरों के सुपुर्द	३८,००० रु०
सार्वजनिक निर्म्माण विभाग के अफसरों के सुपुर्द	३,८२,००० ”
योग	४,२०,००० रु०

१९--कागज़ कलम और छपाई—इस मद्द का व्यौरा इस प्रकार था—

कानूनी रिपोर्टें, सरकारी गज़ट और अन्य पुस्तकें या पत्रिकायें तथा विविध फ़ार्म	२,१०,००० रु०
प्रेस की अन्य आय, हाईकोर्ट या अन्य संस्थाओं का काम करने से	२,०१,८०० ”
घटाओ—वापसी	८०० ”
योग	४,११,००० रु०

२०----पेन्शन आदि के लिये सहायता—इस मद्द का ब्यौरा इस प्रकार है—

कोर्ट आफ़ बार्ड्स के, तथा विदेशी नौकरियों में लगे हुए सरकारी आदमियों के कारण, आय; जिले आदि से सहायता; अन्य सरदारों से उनके सम्बन्ध में दी गयी पेंशनों के विषय में सहायता	३,६५,००० रु०
विविध	२०० रु०
घटाओ—वापसी	२०० "
योग	३,६५,००० "

२१---विविध—इस मद्द का ब्यौरा इस प्रकार है —

पुराने स्टोर और सामान की बिक्री	६,००० रु०
ज़मीन और मकान आदि (नज़ूल) की बिक्री	१०,००० "
सरकारी लेखा-परीक्षा की फीस	१,२१,००० "
ज़मीन और मकान का किराया	१,६५,००० "
अन्य फीस, जुर्माना या ज़ब्ती	७,०५० "
फुटकर	१,६२,२०० "
घटाओ—वापसी	१६,२५० "
योग	४,८८,००० "

फुट कर आय दीवानी, फ़ौजदारी, मालगुजारी की और कमिश्नरों की अदालती के अहातों में खाद्य पदार्थ बेचने के लाइसैंस की फीस, तथा घास की बिक्री आदि से होने वाली आय सम्मिलित है।

कर-भार—प्रान्तीय आय की मद्दों का ब्यौरा समाप्त हो गया। केन्द्रीय आय का वर्णन पहले किया जा चुका। अब हम यह विचार करेंगे कि केन्द्रीय और प्रान्तीय सरकार आय के रूप में जो कर वसूल करती हैं, उनका ब्रिटिश भारत के प्रत्येक आदमी पर कितना भार पड़ता है।*

सरकारी आय; प्रजापर कर—सरकार को माल-गुज़ारी, नमक, स्टाम्प, आबकारी, प्रान्तीय महसूल, आयात, निर्यात कर, आय कर और रजिस्टरी से जो आय होती है, वह सब प्रजा पर कर ही है। इस के अतिरिक्त रेलवे, डाक, तार आदि व्यापारिक कार्यों से भी सरकार को जो आय होती है, वह भी राज्य प्रबन्ध में ही ख़र्च की जाती है। यदि यह आय न हो तो सरकार इतनी आय, अन्य कर लगा कर वसूल करे। प्रत्येक भारतवासी को कितना कर देना पड़ता है, इस का हिसाब लगाने के लिये, पहिले सरकार की, एक वर्ष की उपर्युक्त

---

* माडर्न रिव्यू' में प्रकाशित, श्री० सी० एन० वकील के लेख के आधार पर

सब आमदनी मालूम करनी चाहिये, फिर उसे ब्रिटिश भारत की उस वर्ष की जन संख्या से विभक्त करना चाहिये।

जनता की आय—परन्तु किसी देश के निवासियों पर कर भार कितना है, यह जानने के लिये उनसे वसूल होने वाले कर की मात्रा का ही ज्ञान पर्याप्त नहीं है। वरन् यह हिसाब लगाना होगा, उनकी कुल आय से, उनके कर का क्या अनुपात है। इस प्रकार यह सर्वथा सम्भव है कि एक देश में कर की मात्रा दूसरे देश की अपेक्षा बहुत अधिक होने पर भी, कर-भार कम हो। अस्तु, जनता की आय का हिसाब लगाना आवश्यक है। यह हिसाब ठीक ठीक लगना तो बहुत कठिन है, तथापि जो अनुमान बड़े अधिकारियों ने अपने वाद विवाद में आधार रूप स्वीकार किया है, उसका उपयोग किया जा सकता है।

सन् १८७० ई० में स्व० दादा भाई नौरोजी ने बड़े परिश्रम और अनुसंधान से भारतवासियों की औसत वार्षिक आय का हिसाब लगाया तो वह २० रु० मालूम हुई थी। सन् १८७१ ई० में आय का यही अनुमान अधीन भारत मंत्री मि० ग्रांट डफ़ ने किया और पीछे वाइसराय लार्डमेयो ने भी व्यवस्थापक सभा में इस से सहमत होना प्रकट किया।

सन् १८८० ई० में फ़ेमिन (अकाल) कमीशन ने भारत की खेती की पैदावार का अनुमान किया, इस अनुमान के आधार पर सर डेविड बारबर ने भारत-वासियों की, उस समय की कुल औसत वार्षिक आय २७ रु० होने का अनुमान किया।

सन् १९०१ ई० में लार्ड कर्ज़न ने व्यवस्थापक सभा में सूचित किया कि सर डेविड की तरह ही जांच करने पर भारतवासियों की औसत वार्षिक आय ३० रु० मालूम हुई है । इस वर्ष, मि० डिग्बी ने भारतवासियों की यह आय केवल १८ रु० ९ आने सिद्ध की थी, इसका किसी ने सप्रमाण खंडन नहीं किया पर अधिकारी ३० रु० का ही उल्लेख करते रहे।

सन् १९२१ ई० में मि० कुक ने राज्य परिषद् में कहा कि अब पहले ही ढंग से जांच करने से उपर्युक्त आय का अंक ५०) रु० होता है। परन्तु मि० वी० जी० काले के हिसाब से यह आय ३६) रु० से अधिक नहीं है।

जनता की आय से राज्यकर का अनुपात----

सन्	वार्षिक आय रुपये	रेल आदि की आय छोड़कर कर का हिसाब				रेल आदि की आय सहित, कर का हिसाब			
		रु०	आ०	पा०	आय पर फ़ीसदी	रु०	आ०	पा०	आय पर फ़ीसदी
१८७१	२०	१	१३	६	६ ३		...		...
१८८१	२७	२	२	३	८		...		...
१८९१	...	२	३	११	...		...		...
१९०१	३०	२	१०	२	८.८		...		...
१९११	५०	२	१३	११	५.७	३	१	५	६.२
१९१३	...	३	१	६	...	३	६	२	...
१९२०	...	५	०	११	...	५	४	३	...
१९२२	...	६	४	३	...	६	७	७	...

इस नक्शे से मालूम होता है कि सन् १९०१ ई० तक आमदनी पर का अनुपात ८ से ९ फ़ी सदी तक था सन् १९११ में, रेल आदि की आय छोड़ कर, कर ५.७ फ़ी सदी और उसे मिला कर ६.२ फी सदा था। सन् १९०१ ई० से सन् १९११ ई०

तक, कर में कुछ कमी हुई। परन्तु यह कमी बहुत अधिक इस लिये दिखाई पड़ती है कि प्रति मनुष्य आमदनी की औसत में बहुत अत्युक्ति कर दी गयी है। १८८१ से १६०१ तक २० वर्ष में प्रति मनुष्य आमदनी केवल तीन रुपये बढ़ी और पीछे दस वर्ष में ही उस की वृद्धि एकदम २० रुपया बतला दी। सन् १६१३ ई० से सन् १६२० ई० तक अर्थात् महायुद्धके समय और उसके समाप्ति कालमें हम पर प्रति मनुष्य लगभग दो रुपये का कर और बढ़ा। उसके बाद अगले दो वर्ष के समय में प्रति मनुष्य कर की मात्रा एक रुपये से अधिक और बढ़ गयी। इस समय, महायुद्ध से पहिले की अपेक्षा, कर दूने से अधिक है। इस लिये या तो कर भार दूने से अधिक हो गया है अथवा भारतवासियों की आमदनी दूने से अधिक हो गयी है। सम्भवतः अधिकारी दूसरी बात ही कहना चाहेंगे, परन्तु वे कुछ ही कहें, भुक्त भोगी भारतवासी ही जानते हैं कि उन्हें कर भार अब कितना अधिक प्रतीत हो रहा है।

भारतवासियों की इस समय की आमदनी के सम्बन्ध में हमें श्री० वी० जी० काले का हिसाब ठीक जंचता है, जिसके अनुसार प्रति मनुष्य की औसत वार्षिक आय अब ३६) रु० है। इस प्रकार भारतवासी अपनी आय का १७, १८ फीसदी कर के स्वरूप में, राज्य कोष को देते हैं। ब्रिटिश शासन के ऐसे मंहगे होने की दशा में, प्रजा में सुख और शान्ति कैसे रह सकती है?

नवां परिच्छेद

सार्वजनिक ऋण

राज्य को ऋण की आवश्यकता—पहिले कह चुके हैं कि राज्य को विविध कार्यों के सम्पादन के लिये, उनके ख़र्च की व्यवस्था करनी होती है, कर लगाने पड़ते हैं। ज्यों ज्यों खर्च बढ़ेगा, कर बढ़ाने होंगे। पहले तत्कालीन करों की मात्रा या संख्या बढ़ा कर अधिक आय प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाता है। परन्तु जब खर्च इतना अधिक बढ़ जाता है कि उसको पूरा करने के लिये करों के बढ़ाने की गुञ्जायश न हो, अथवा जब कोई खर्च इस प्रकार का हो कि उसके लिये कर लगाना उचित न समझा जाय, तो राज्य को ऋण लेने की आवश्यकता होती है।

राज्य को ऋण लेने की सुविधा-सहकारी समितियों या व्यापारिक कम्पनियों की भांति राज्य की साख, व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक होती है। उसे पूँजी, अधिक मात्रा में और कम सूद पर मिल सकती है। यदि ऋण बहुत ही अधिक लिया जाय तो यह सुविधा कम हो जायगी। जब किसी देश की माली हालत अच्छी न हो, हिसाब साफ़ न रहता हो या अशान्ति और युद्ध की अवस्था हो, तो भी ऋण

लेने की सुविधा कम हो जाती है। पराधीन देश की सरकार शासक देश से अथवा उसकी साख पर ऋण ले सकती है।

हम पहले बता आये हैं कि कई वर्षों से भारत सरकार का खर्च उसकी आय से अधिक हो रहा है, नये नये कर लगाने पर भी उसे घाटा रहता है, ऋण बढ़ता जाता है। परन्तु भारत सरकार को ब्रिटिश सरकार की साख पर, ऋण लेने की सुविधा बनी हुई है।

सावधानी की आवश्यकता—परन्तु सुविधा होने पर भी राज्य को अन्धाधुन्ध ऋण नहीं लेते रहना चाहिये। ऋण देने वाले पूंजीपति केवल सूद का ही लाभ नहीं सोचते, वरन् अपने व्यापारिक और राजनैतिक अधिकारों की वृद्धि का भी लक्ष्य रखते हैं। इस प्रकार ज्यों ज्यों किसी देश पर ऋण का भार बढ़ता जाता है, वह आर्थिक और राजनैतिक, दोनों दृष्टियों से अधिकाधिक पराधीन होता जाता है। जैसा कि हमने अपने 'भारतीय अर्थ शास्त्र' में लिखा है, भारत सरकार पर गोरे व्यापारियों का प्रभाव प्रसिद्ध है, उनके सामने प्रायः भारतवासियों के हिताहित का विचार नहीं होने पाता। जब कभी कोई राजनैतिक सुधार की बात उठती है, तो विदेशी पूंजी वाले हमारे भविष्य का निर्णय करने का अधिकार मांगते हैं। अस्तु, ऋण लेने में सावधानी रखने की बड़ी आवश्यकता है।

किन दशाओं में ऋण लेना बेहतर है ?—साधारणतया दो दशायें ऐसी हैं जिनमें धन प्राप्त करने के लिये, राज्य को, नये कर लगाने की अपेक्षा, ऋण लेना बेहतर है—

(१) जब राज्य नहर या पुल आदि ऐसा सार्वजनिक निम्र्माण कार्य करे जिनसे महसूल आदि की आय हो, अथवा जब वह उद्योग धन्धों की वृद्धि तथा व्यापार की उन्नति के ऐसे उत्पादक कार्यों का संचालन करे जिनसे देशवासियों की धन-वृद्धि हो और कालान्तर में राज्य की, करों से प्राप्त आय स्वयं बढ़ जाय। ऐसी दशा में आवश्यक धन, कर-वृद्धि से प्राप्त करना बुद्धिमानी नहीं है; हां राज्य को, प्राप्त होने वाली आय का बड़ी सावधानी से अनुमान करना चाहिये।

(२) जब राज्य पर किसी दूसरे राज्य का आक्रमण या अकाल आदि किसी ऐसे आकस्मिक व्यय का भार आ पड़े, जिसकी बार बार पुनरावृत्ति की आशा न हो। ऐसी दशा में भी ऋण लेना ही उचित होगा, क्योंकि कर लगाने और फिर जल्दी उसे हटाने से राजस्व के क्रम में बड़ी गड़बड़ मचती है और करों की समानता घटती है।

दूसरों को परतंत्र करने वाले युद्धों के लिये अथवा अन्य अनुत्पादक कार्यों के लिये, अपने सिर पर ऋण का भार चढ़ाना कदापि उचित नहीं।

भारत का सार्वजनिक ऋण—भारतवर्ष के सार्वजनिक ऋण का बीज ईस्ट इन्डिया कम्पनी ने बोया और उसी ने इसके वृक्ष को बढ़ाया। कम्पनी अन्त होने के समय पार्लिमेंट ने उसकी जड़ नहीं काटी, उलटा उसे और सुरक्षित कर दिया। पार्लिमेंट के समय में इसकी खूब वृद्धि हुई है।

इस ऋण का यह तो कारण है ही, कि राज्य ने इतना रुपया व्यय किया कि नये नये करों के लगाने और बढ़ाने पर भी उसका पूरा नहीं पड़ा। इसके अतिरिक्त यह बात विशेष रूप से स्मरणीय है कि भारतवर्ष को अपने पराधीन होने का मूल्य भी स्वयं चुकाना पड़ा है। पुनः एशिया के कई स्थानों में, और अफ्रीका के कुछ स्थानों में भी, अङ्गरेजों का व्यापारिक और राजनैतिक आधिपत्य स्थिर करने में भी प्रायः भारतवर्ष के ही द्रव्य और सेना का उपयोग हुआ है। इस बात की पुष्टि के लिये हम 'स्वार्थ' (चैत्र १९७९ वि०) के आधार पर कुछ घटनाओं का वर्णन करते हैं।

भारत पर कम्पनी के युद्धों का भार—ईस्ट इंडिया कम्पनी इंगलैंड के राजा की प्रतिनिधि थी। उसने इङ्गलैंड के शत्रु फ्रांस से, और फ्रांस से सहायता प्राप्त भारतीय नरेशों से कई युद्ध किये। वह इनका भार न उठा सकी, ऋण ग्रस्त हो गयी। सन् १७६५ ई० में बंगाल की दीवानी प्राप्त कर लेने पर उसने अपने ऋण का भार इस प्रान्त से होने वाली आम-

दनी पर डाल दिया। वास्तव में यहां से ही भारत का सार्व-जनिक ऋण आरम्भ होता हैं। पीछे बंगाल की आय की सहायता से मैसूर के नवाबों की भैाम सम्पत्ति हड़प की गयी और मैसूर की आय का उपयोग करके मराठों के राज्य का अन्त किया गया।

सिंहलद्वीप, सिंगापुर, हांकांग, अदन और रंगून सब ही प्रदेश इंगलैंड ने भारत की सेना और धन के द्वारा जीते हैं। अफ़गानिस्तान, चीन, वर्मा और ईरान से अङ्गरेज़ों ने युद्ध किये, उनमें रुपयों की जरूरत हुई। कम्पनी का उद्देश्य रुपया कमाना था, वह इङ्गलैंड से तो धन लाकर यहां लगाने वाली थी ही नहीं। बस, इन सब युद्धों में भी भारत के ही द्रव्य और सेना का उपयोग किया गया। इस प्रकार भारत पर ऋण-भार बढ़ता गया।

कम्पनी के कारोबार का भार—कम्पनी ने अपना जो कारबार सेंटहलीना, वेनकूलन, मलाक्का, प्रिंस आफ़ वेल्स द्वीप, और कान्टन में चला रखा था, उसका सब व्यय भार, और अङ्गरेजों ने जो आक्रमण उत्तमाशा अन्तरीप, मनिला, मारिशश तथा मलक्का टापुओं पर किये थे, उन सब का खर्च भी भारत के मत्थे मढ़ा गया, यद्यपि इनमें से कुछ पर तो भारतवर्ष में आने से पहिले ही, कम्पनी ने व्यापारिक हेतुओं के लिये अपना अधिकार जमा रखा था।

ईस्ट इंडया कम्पनी को सन् १८१३ ई० तक भारतवर्ष में व्यापारिक अधिकारों के अतिरिक्त राजनैतिक सत्ता प्राप्त रही और उसने अपने इन दो खातों का हिसाब अलग न रख कर अपने विविध प्रकार के व्यापारिक और युद्ध सम्बन्धी ऐसे व्यय के भार को भी शासन सम्बन्धी ही दर्शा कर, भारत के मत्थे पटक दिया, जिसका भारत के हित से कुछ भी सम्बन्ध न था, अथवा बहुत ही कम था।

कम्पनी के पुरष्कार का भार—सन् १८१३ ई० से कम्पनी को केवल चीन में व्यापार करने का अधिकार रह गया था, सन् १८३३ ई० में वह भी हटा दिया गया। अब से कम्पनी भारतवर्ष की शासक समुदाय मात्र रही। उसकी सम्पत्ति भारत सम्राट् को दी गयी। उसके ऋण और दायित्व का भार भारत के सिर डाला गया। निश्चय हुआ कि इङ्गलैंड की पूंजी पर १०॥ प्रति सैकड़ा (कुल लगभग ६३ लाख रुपया) प्रति वर्ष दिया जावे। सन् १८७३ ई० के बाद पार्लियामेंट चाहे तो पूंजी के हिस्सों के प्रति एक हजार रुपये के बदले दो हजार रुपये (अर्थात् कुल १२ करोड़ रुपये) एक साथ देकर मुनाफ़े से छुटकारा पा सके। कम्पनी की व्यापारिक सम्पत्ति में से दो करोड़ रुपया निकाल कर कम्पनी के पूंजी के धन को निपटाने के लिये एक नया खाता रखा जावे, यदि कम्पनी को किसी समय वार्षिक मुनाफ़ा न मिल सके तो वह इस खाते में

से दिया जावे। कम्पनी के व्यापार विभाग के कर्मचारियों को उचित मुआवज़ा दिया जावे।

इस प्रकार भारतवर्ष ४० वर्ष तक ६३ लाख रुपया प्रति वर्ष वार्षिक मुनाफे के नाम से देता रहा। सन् १८७३ ई० में ऋण चुकाने वाले फंड में १२ करोड़ रुपया नहीं हो सका, जैसी की पूर्व में आशा की गयी थी। कमी को पूरा करने के लिये भारत मंत्री ने भारत के जिम्मे ४॥ करोड़ रुपया और, सार्वजनिक ऋण के नाम से मढ़ दिया।

कम्पनी बहुत सी बातों में भारत के लिये एक असह्य और अन्याय युक्त भार थी। सन् १८३३ ई० में जब उसके व्यापारिक अधिकारों का अन्त किया गया तो उचित तो यही था कि भारतवर्ष को उस बोझ से मुक्त करने का प्रयत्न किया जाता, परन्तु यहां उसे स्थायी रूप से भारत के गले मढ़ दिया और कुछ अंशों में उसे बढ़ा भी दिया।

'होम चार्जेज़' का उल्लेख पिछले परिच्छेद में किया जा चुका है। वह भी सार्वजनिक ऋण की उत्पत्ति या वृद्धि में बहुत सहायक हुआ है। रेलों और नहरों के लिये भी ऋण लेना पड़ा है। रेलों में अन्धाधुन्ध खर्च हुआ, और कई वर्ष अपार हानि उठानी पड़ी।

सिपाही-विद्रोह का भार—सन् १८५७ ई० में भारत में सिपाही-विद्रोह हुआ। इसके भिन्न भिन्न कारणों के

ब्यौरे में भले ही मत भेद हो, यह निश्चित है कि यदि अधिकारी अधिक स्वार्थी न होते और प्रजा से उचित व्यवहार करते रहते, तो इस विद्रोह की सम्भावना बहुत कम होती। अस्तु, विद्रोह सफल हो. या विफल, इसके होने का उत्तरदायित्व अधिकारियों पर है।* परन्तु अधिकारी-पक्ष-प्रधान सरकार ने उन्हें तो क्षमा कर दिया और उसके दमन करने का सब भार भारतवर्ष पर डाल दिया। इस लिये अगले वर्ष ऋण की मात्रा और बढ़ गयी।

पार्लियामेंट का समय—यह बड़ा भारी ऋण चाहे वह कम्पनी की एशिया, योरप या अफ्रीका महाद्वीप में लड़ी हुई लड़ाइयों के कारण बढ़ा हो, चाहे 'होम चार्जेज' के नाम से दी जाने वाली वार्षिक रकम के कारण बढ़ा हो, अथवा सन् १८५७ ई० का सिपाही विद्रोह ही इसकी अपार वृद्धि का हेतु हो, सन् १८५८ की नयी सरकार को उसी समय हस्तान्तरित किया गया जब भारतवर्ष का भाग्य-चक्र कम्पनी के हाथ

---

* महाशय जाह्न ब्राइट ने कहा था, "मेरा विचार है कि सिपाही विद्रोह के दमन करने में जो ४० करोड़ रुपया व्यय हुआ है, उसे भारतवासियों के सिर मढ़ना उनके ऊपर असह्य बोझ होगा। विद्रोह, पार्लियामेंट के कुशासन और अङ्गरेजों की दुर्नीति का परिणाम है। यदि प्रत्येक मनुष्य के साथ न्याय किया जाय तो इसमें सन्देह नहीं कि ये ४० करोड़ रुपये इस देश (इङ्गलैंड) की प्रजा से कर द्वारा वसूल होने चाहिये।

से निकल कर साम्राज्ञी के हाथों में पहुंचा । सन् १८५८ ई० में सन् १८३३ ई० की बात दोहरायी गयी । उक्त वर्ष में 'भारत की सुव्यवस्था और सुशासन के लिये' पास किये हुए ऐक्ट में लिखा है कि "ईस्ट इंडया कम्पनी के मूल धन पर का मुनाफा, और तमाम तमस्सुक, बौंड और अन्य सब ग्रेट ब्रिटेन के ऋण तथा भैाम विभाग के सब प्रकार के ऋण तथा कम्पनी के और भी सब प्रकार के देय ऋण, भारत के राज्य कर की आय से दिये जावेंगे और दिये जाने योग्य हैं ।"

क्रमशः भारत का शासन व्यय बढ़ता गया । राजस्व-सदस्य ने आय का अनुमान कम और व्यय का अनुमान बहुत अधिक करके करों की दर ऊँची रक्खी । इस से बीसवीं सदी के प्रथम दस वर्षों में सरकारी बचत का औसत चार करोड़ रुपये रहा । सरकार ने फिर भी करों को कम करने का विचार न किया, और न बचत के रुपये से देश में शिक्षा और स्वास्थ का विशेष प्रबन्ध किया । उसने प्रायः बचत के रुपये को अनुत्पादक ऋण कम करने के काम में लगाया । महायुद्ध के समय में दरिद्र भारत-सरकार ने धनी ब्रिटिश सरकार को डेढ़ सौ करोड़ रुपया 'दान' दिया । इस रकम से भारत-सरकार के अनुत्पादक ऋण में इतनी वृद्धि और हो गयी ।

ऋण का व्यौरा—सन् १९२२-२३ ई० के आय व्यय के अनुमान में सार्वजनिक ऋण इस प्रकार दिखाया गया था—

पौंडों में; २२,४२,५७·४४५ पौंड

अर्थात्	३,३६,३८,६१,६७५ रु०
रुपये में—	
नया ऋण	२५,००,००,००० ”
छः फीसदी सूद वाला	४०,५९,०३,७०० ”
साढ़े पांच ” ”	२९,१७,१९,५०० ”
पांच ” ”	४१,५०,३३,७०० ”
चार ” ”	१७,००,८७,२०० ”
साढ़े तीन ” ”	१,१९,१८,५६,८९१ ”
तीन ” ”	६,४८,८०,०५० ”
अन्य ऋण	१,००,१३,५०० ”
अस्थायी ऋण	
छः फीसदी सूद वाला	३७,८९,४७.००० ”
साढ़े पांच ” ”	२,५९,२४,१०० ”
ट्रेजरी (कोष) बिल	
सर्व साधारण के नाम जारी किये	४२,३४,१०,००० ”
कागजी मुद्रा चलन कोष खाते जारी किये	४६,७४,५४,००० ”
सेविंग बैंक की जमा	५४,७२,७१,३९४ ”
डाकखाने के कैश सार्टिफिकेट	२,३४,३४,७५६ ”
योग	८,०२,९७,९७,४६६ ”

सूद का हिसाब—केन्द्रीय व्यय में सार्वजनिक ऋण के सूद का हिसाब दिया गया है। वहां उसकी रकम १५.२ करोड़ रूपये दिखायी गयी है। यह सूद अनुत्पादक ऋण पर है, अतः यह रकम व्यर्थ जाती है। विदित हो कि उपर्युक्त रकम दिखाते हुए कुल सूद की रकम में से रेल, आबपाशी, डाक और तार की मद्दों के, तथा प्रान्तीय सरकारों से लिये जाने वाले सूद की रकम घटा दी गयी है। अन्यथा उस वर्ष का कुल सूद ३३॥ करोड़ रुपये से अधिक बैठता है।

अधिकारियों के अन्धाधुन्ध खर्च के कारण, नये नये करों के लगते हुए भी देश पर, सूद पर लिये हुए ऋण का भार बढ़ता जाता है। नेताओं को इसकी चिन्ता होनी अनिवार्य थी। अतः गत गया की कांग्रेस में यह प्रश्न उठा।

कांग्रेस का प्रस्ताव; देश भावी ऋण का उत्तरदाता नहीं—गया कांग्रेस (सन् १९२२ ई०) में यह स्वीकृत हुआ है कि क्योंकि सरकार ने अकारण ही सैनिक तथा अन्य अपव्यय बढ़ा कर देश पर अपरिमित भार लाद दिया है, और क्योंकि सरकार अभी तक उस व्यवस्थापक सभा के आधार पर अपव्यय कर रही है जो जनता की बहु-संख्या, अथवा किसी संतोषजनक संख्या की प्रतिनिधि संस्था नहीं है, जैसी कि पहले घोषणा की गयी थी, और सरकार को यदि इस तरह अपव्यय करने दिया गया तो भविष्य में भी जनता

को सुख और समृद्धि-पूर्ण जीवन व्यतीत करना असम्भव हो जायगा, इस लिये यह आवश्यक हो गया है कि सरकार की इस अनुत्तरदायी चाल को रोका जाय। यह कांग्रेस घोषणा करती है कि राष्ट्रीय बहिष्कार करने पर बनाई हुई अथवा बनाई जाने वाली व्यवस्थापक सभाओं का भविष्य में राष्ट्र के नाम पर ऋण लेने का अधिकार स्वीकार नहीं किया जायगा। यह कांग्रेस संसार को सचेत करती है कि अब से जो ऋण लिया जायगा, उसका स्वराज्य होने पर भारतवर्ष देनदार न होगा, अब तक जो ऋण, ग़लत या सही, ले लिया गया है, उसे, देश देगा।

ऋण दूर किस प्रकार हो?—यदि कांग्रेस में प्रतिध्वनित भारतीय जनता के मत का विचार करके सरकार अपना खर्च परिमित रखे तो ऋण बढ़ाने की आवश्यकता ही न हो। परन्तु ऋण की वर्तमान मात्रा भी तो इतनी है कि उसके सूद के कारण देश की आर्थिक उन्नति में बड़ी बाधा उपस्थित हो रही है। इसे किस प्रकार दूर किया जाय? इस विषय में ता० २४ मई सन् १९२३ ई० के "यंग इन्डिया" के राजस्व और अर्थ सम्बन्धी सप्लीमेंट के लेखक के निम्न लिखित विचार विचारणीय हैं।

१—इंगलैंड भारत से वह ऋण वापिस लेना छोड़ दे जो उसके हित के लिये लिया गया है। यह रकम ३०० करोड़ रुपये के लगभग होगी। हमें इंगलैंड का ३६०. करोड़ रुपये देना है।

यह रकम १२.००० करोड़ रुपये के कर्ज़दार इङ्गलैंड के लिये छोड़ देनी बहुत कठिन नहीं है।

२—तथापि, यदि यह न हो तो इंगलैंड भारत सरकार को ही ऋण मुक्त होने के लिये यथेष्ट उपाय काम में लाने में, सहायक हो।

(क) जिन आदमियों की ज़मीन आदि का आमदनी पर आय-कर नहीं लगता, उन पर मालगुज़ारी के अतिरिक्त अन्य लोगों की तरह आय-कर भी लगाया जावे।* इस से प्रति वर्ष लगभग १८ करोड़ रुपये की आय होने का अनमान है।

(ख) सब ऋण के सूद की दर ४ फ़ीसदी कर दी जाय। इससे प्रति वर्ष ८ करोड रुपये का बचत होने की अनुमान है।

(ग) जो लोग भारत सरकार से सूद की आमदनी लेते हैं, उनकी आमदनी पर भारत-सरकार टैक्स लगावे, चाहे वे भारतवर्ष से बाहर भी रहते हों। इंगलैंड ऐसा करता है, भारत वर्ष को भी ऐसा करने में विशेष आपत्ति नहीं होनी चाहिए। इससे प्रति वर्ष ४ करोड रुपये की आय होने का अनुमान है।

---

*मालगुज़ारी देने वालों में कुछ आदमी सरकार को उपज के हिसाब से बहुत अधिक मालगुज़ारी देते हैं; कुछ, कम। उन पर आय-कर लगाने में इस बात का लिहाज़ रखना होगा। परन्तु मालगुज़ारी लेना ही कहां तक उचित है, इस विषय पर मतभेद है। हम अपनी सम्मति अन्यत्र प्रकट कर चुके हैं। --लेखक।

यह सब मिलाकर १८+८+४=३०करोड़ की आमदनी या बचत भारत-सरकार को प्रतिवर्ष हो सकती है। यह केवल ऋण को चुकाने में ही काम में लाई जाय। आशा है, सरकारी अधिकारी तथा प्रजा-प्रिय नेता इस विषय का यथेष्ट विचार करके देश को ऋण के भयंकर बोझ से मुक्त करेंगे।

दसवां परिच्छेद

स्थानीय राजस्व

केन्द्रीय और प्रान्तीय राजस्व का वर्णन कर चुकने पर अब स्थानीय राजस्व का वर्णन किया जाता है।

स्थानीय कार्यों की विशेषता—नगरों और देहातों में बहुत से काम ऐसे होते हैं जिन्हें संगठित रूप से करने की आवश्यकता होती है। सड़क बनवाना नालियाँ बनवाना और साफ कराना, बालकों का शिक्षा का प्रबन्ध करना आदि ऐसे कार्य है जिन्हें प्रत्येक व्यक्ति पृथक पृथक रूप से अच्छी तरह सम्पादित नहीं कर सकता। परन्तु केन्द्रीय या प्रान्तीय सरकार द्वारा भी ये यथेष्ट रूप में नहीं किये जा सकते। क्योंकि इनमें निरीक्षण या देख भाल की बहुत आवश्यकता होती है, और देश भर के सब नगरों या देहातों में ये कार्य एक ही तरह होने के बजाय पर स्थानीय परिस्थिति के अनुसार भिन्न

भिन्न प्रकार के होने की आवश्यकता होती है। इस लिये किसी नगर या देहात के ऐसे कार्य उसी स्थान के निवासियों के प्रतिनिधि विशेष उत्साह और कुशलता पूर्वक करा सकते है।

स्थानी और अन्य राजस्व में भेद—स्थानीय राजस्व में और प्रान्तीय तथा केन्द्रीय राजस्व का भेद जानने के लिये हमें स्थानीय संस्थाओं के और प्रान्तीय तथा केन्द्रीय सरकार के कामों के भेद पर विचार करना चाहिए।

१—स्थानीय संस्थाओं के कार्य का विस्तार कम होता है।

२—स्थानीय संस्थाओं के कार्य का सम्बन्ध किसी खास ज़िले अथवा उसके भी किसी एक भाग से रहता है।

३—केन्द्रीय अथवा प्रान्तीय व्यवस्था से संस्थाओं की शक्ति पर बहुत निमन्त्रण रहता है।

४—स्थानीय संस्थाओं कार्य बहुधा आर्थिक प्रकार के होते है और उनसे होने वाले लाभ की कुछ पाप हो सकती है।

स्थानीय संस्थाओं में कार्य करने से सार्वसाधारण को राजनैतिक कार्यों की व्यवहारिक शिक्षा मिलती है। यद्यपि प्रान्तीय सरकार इन पर निमन्त्रण अधिकाधिक रखने का विचार करती है, तथापि इनके कार्य क्षेत्र को विस्तृत करने की प्रवृति रहती है।

स्थानीय राजस्व का आदर्श—स्थानीय स्वराज्य पूर्ण रूप से होने की दशा में स्थानीय राजस्व का आदर्श यह है

कि प्रत्येक स्थानीय संस्था अपनी सीमा में रहने वाले आदमियों से अपने कर वसूल करे, उस उस सीमा में उन करों से प्राप्त आय को अपने नागरिकों के हित के लिये, व्यय करने का अधिकार हो, वह इन करों को अपनी इच्छा से अपने साधनों या आवश्यकताओं के अनुसार घटा या बढ़ा सके। उसके कार्य क्षेत्र की सीमा देश के साधारण नियम से निश्चित हो। निस्संदेह प्रत्येक स्थानीय संस्था का एक ऐसे क्षेत्रफल में होने वाले कार्यों से सम्बन्ध रहना चाहिये जो, उसके कार्यों का उद्देश पूरा करते हुए, कम से कम हो। प्रायः एक स्थानीय संस्था की सीमा एक नगर एक बड़ा गांव, या दो तीन छोटे छोटे गावों का समूह समझी जाती है।

स्थानीय स्वराज्य संस्थाओं और सरकार का राजस्व-सम्बन्ध—राजस्व के विषय स्थानीय स्वराज्य संस्था और केन्द्रीय या प्रान्तीय सरकार का सम्बन्ध निम्न लिखित प्रकार का हो सकता है।

१—सरकार, संस्थाओं से वसूल किये जाने वाले करों का स्वरूप, तथा उनकी रकम निर्धारित कर दे, या केवल कर ही निर्धारित करे और यह अधिकार संस्थाओं को दे दे कि वे उससे अनुमति लेकर करों से होने वाली आय को घटा बढ़ा सकें। इस दशा में संस्थायें राजस्व के सम्बन्ध में सरकार के आधीन रहेंगी।

२—सरकार, करों का स्वरूप और उनसे वसूल की जाने वाली रक़म निश्चित करने का अधिकार संस्थाओं को ही दे दें। इस दशा में संस्थायें, राजस्व के सम्बन्ध में स्वाधीन रहेंगी।

यद्यपि इस बात का बिचार किया जाता है कि संस्थायें अपनी आय को बढ़ावे, तथापि अभी तक वे सरकार की सहायता का बहुत आश्रय लेती हैं। उनकी अपनी आय इतनी नहीं होती कि वे अपने निरंतर बढ़ने वाले कार्यों को भली भांति चला सकें, इस लिये जब कभी उन्हें सरकार से यथेष्ट सहायता नहीं मिलती तो वे बहुत आपत्ति में हो जाती हैं।

बड़े बड़े कामों के लिये संस्थाओं को बहुधा ऋण लेना होता है। भारतवर्ष में यह ऋण प्रायः सरकार से लिया जाता है।

स्थानीय करों का विवेचन—कर सम्बन्धी नियम पहिले दिये जा चुके हैं। करों का साधारण विवेचन भी हो चुका है। यहां स्थानीय करों के सम्बन्ध में दो एक विशेष बातों का उल्लेख किया जाता है।

कई प्रान्तों में स्थानीय संस्थाओं की अधिकतर आय उस महसूल से होती है जो (भारतवर्ष के ही) दूसरे स्थानों से उनकी सीमा के अन्दर आने वाले माल पर लगता है। इसे चुंगी कहते हैं। यह कर स्थानीय उपभोग पर लगता है। पर जिन स्थानों से माल आता है, उन पर भी इसका प्रभाव पड़ सकता है।

पाश्चात्य देशों में आन्तरिक व्यापार की खूब उन्नति हो गयी है। नगरों में सड़कों का जालसा बिछा हुआ है और प्रत्येक एक दो ख़ास चीजों के बनाने में लगा रह कर, अपनी शेष सब आवश्कताओं की पूर्त्ति दूसरे स्थानों से माल मँगाकर करता है। ऐसी दशा में चुंगी लगाने का कार्य बहुत असुबिधा जनक और अपरिमित व्यय-साध्य होता है। परन्तु भारतवर्ष में यह बात नहीं है।

व्यापार धन्धों पर लगा हुआ कर यदि वह समुचित विचार पूर्वक निर्धारित किया गया हो, तो सुगमता पूर्वक वसूल हो सकता है और व्यापार धन्धों में विशेष बाधक भी नहीं होता। यही बात नल, रोशनी बाजार आदि के महसूल के सम्बन्ध में कही जा सकती है।

मकान के कर का वर्णन पहिले हो चुका है। यदि मकानों की मांग बहुत हो तो मकान का मालिक इस कर को किराये-दार पर डाल सकता हैं, अन्यथा उसे ही देना पड़ता है।

कुछ स्थानों में यात्री कर लिया जाता है। इसका भार वहां आने वालों पर पड़ता है, जो यह समझा जाता है कि उन स्थानों से लाभ उठाते हैं। यह कर प्रायः रेलवे महसूल के साथ सुभीते से वसूल कर लिया जाता है।

भारतवर्ष की स्थानीय स्वराज्य संस्थायें---

प्राचीन समय में यहां चिरकाल तक स्थानीय कार्य, देहातों

में ग्राम्य संस्थाओं द्वारा और नगरों में व्यापार संघों (Trade guilds) द्वारा होता रहा। भारतवर्ष देहातों का देश है। अब भी यहां ९०.५ फी सदी जनता देहातों में रहती है। पहले यहां का प्रायः प्रत्येक देहात अपनी शिक्षा स्वास्थादि की सामाजिक आवश्यकतायें स्वयम् पूरी कर लेता था। यहां की ग्राम्य पञ्चायतें बहुत प्रसिद्ध रही है। प्रत्येक गांव की पंचायत रक्षार्थ पुलिस रखती थी, छोटे मोटे झगड़ों का निपटारा करती थी, भूमि कर वसूल कर के राज्यकोष में भेजती थी और तालाब, पाठशाला, मन्दिर, पुल, सड़क आदि स्थानीय उपयोगिता के सार्वजनिक कार्यों का प्रबन्ध करती थी। मुग़ल शासन में भी पंचायतों का काम जारी रहा, यद्यपि उनका महत्व धीरे धीरे घटता गया। पीछे वे लुप्त प्रायः हो गये। केवल थोड़े से चिन्ह शेष हैं, जो उनके उच्च आदर्श की स्मृति कराते हैं। अङ्गरेज़ों ने प्राचीन संस्थाओं की पुष्टि नहीं की, वरन् उनके स्थान पर नवीन पौदों का बीज बोया, जिन्होंने अभी तक देश में अच्छी जड़ नहीं पकड़ पाई है।

अस्तु, भारतवर्ष में वर्तमान स्थानीय संस्थाओं के निम्नलिखित भेद हैं—

१—म्युनिसिपैलिटियां और कारपोरेशन, तथा नोटीफाइड एरिया,

२—स्थानीय और जिला बोर्ड, यूनियन कमेटियां।

३—पोर्ट ट्रस्ट

अब इनका क्रमशः वर्णन करते हैं।

म्यूनिसिपैलिटियां और कारपोरेशन---

सन् १८४२ ई० बंगाल में और सन् १८५० ई० में समस्त भारतवर्ष में म्युनिसिपैलिटियां स्थापित करने के विचार से ऐक्ट बनाया गया। इनकी कुल वास्तविक उन्नति सन् १८७० ई० में, लार्ड मेयों के समय में हुई। सन् १८८४ ई० में लार्ड रिपन ने इनके अधिकार बढ़ाये, तब से इनका विशेष प्रचार हुआ है।

प्रत्येक म्यूनिसिपेलटी की सीमा निश्चित की हुई है। जो लोग उसके अन्दर रहते और उसे टैक्स देते हैं, वे 'रेट पेयर' या कर दाता कहाते हैं। इन कर दाताओं में से जो निर्द्धारित वार्षिक कर देते हैं अथवा जिनके पास जागीर है वे "वोटर" या मत दाता कहाते हैं। इन्हें अपनी २ म्यूनिसिपेलटी के लिये मेम्बर (म्यूनिसिपिल कमिश्नर) चुनने का अधिकार है। १८ वर्ष से कम उमर का अथवा निर्द्धारित गुणों से कम योग्यता वाला मनुष्य वोटर नहीं हो सकता। अधिकांश भारत में चुने हुये मेम्बर कुल संख्या के आधे से दो तिहाई तक है। सभापति बम्बई, मद्रास, बङ्गाल और मध्यप्रान्त के, प्राय: और सरकारी अधिक हैं। उपसभापति मेम्बरों में से ही निर्वाचित होते हैं। सभापति, उपसभापति तथा मेम्बरों की अवधि तीन वर्ष की होती है। म्युनिसिपैलिटियों के कर्मचारियों में सेक्रेटरी का पद भी बड़े महत्व का होता है।

तीन महा प्रान्तों—बङ्गाल, बम्बई और मद्रास के प्रधान नगरों अर्थात् कलकत्ता, बम्बई और मद्रास शहर की म्युनिसि

पल कारपोरेशन" या केवल 'कारपोरेशन" कहलाती हैं। इनके मेम्बरों (कमिश्नरों) को कौंसिलर कहते हैं। अन्य म्युनिसिपैलिटियों से, इनका संगठन कुछ भिन्न प्रकार का, और आय व्यय तथा कार्य-क्षेत्र अधिक होता है।

कार्य—म्युनिसिपैलिटियों और कारपोरेशनों के मुख्य कार्य ये हैं—

१—सर्व साधारण की सुबिधा की व्यवस्था करना—सड़कें बनवाना, उनकी मरम्मत करवाना, गली कूचों सड़कों की सफ़ाई और रोशनी का प्रबन्ध करना, पबलिक मकानात बनवाना।

स्वास्थ्य रक्षा—औषध शास्त्र के नियमानुसार दवा दारू देना, चेचक और प्लेग के टीके तथा मैले पानी के बहने का प्रबन्ध कराना और छूत की बीमारियों को बन्द करने के लिये उचित उपाय काम में लाना। पीने के लिये स्वच्छ जल (नल आदि) की व्यवस्था करना, खाने के पदार्थों में कोई हानिकारक वस्तु तो नहीं मिलाई गई है; इसका निरीक्षण करना इस सम्बन्ध में कर्तव्य त्रुटि के लिये किसी व्यक्ति पर म्यूनिसिपेलटी ५०) रु० तक जुर्माना कर सकती है।

शिक्षा—विशेष कर प्रारंभिक शिक्षा के लिये पाठशालाओं का समुचित प्रबन्ध करना। पहिले अकाल के कष्ट निवारण का कार्य भी म्यूनिसिपेलटियों के सुपुर्द था पर अब यह उनसे हटा दिया गया है।

आमदनी के स्रोत

(क) चुंगी (अधिकतर उत्तर हिन्दुस्तान, बंबई व मध्य-प्रदेश में); यह म्यूनिसिपेलिटी की सीमा के अन्दर आने वाले माल तथा जानवरों पर लगती है।

(ख) मकान और ज़मीन पर टैक्स (मद्रास, बंबई, बङ्गाल मध्यप्रान्त आदि में)' यह सालाना किराये पर ८॥ फी सदी से अधिक नहीं लगाया जा सकता।

(ग) व्यापार धंधों पर टैक्स (अधिकतर मद्रास और संयुक्त प्रान्त में)।

(घ) सड़क व पुलों पर महसूल (विशेष कर मद्रास और आसाम में)।

(ङ) सवारियों पर टैक्स, गाड़ी, इक्का, बग्गी, साईकिल, मोटर तथा नाव आदि पर।

(च) नल, रोशनी, पाखाने, हाट, बाजार, कसाई खाने का महसूल।

(छ) स्कूल फ़ीस, पशुओं पर टैक्स।

सरकारी सहायता

सरकार की ओर से म्यूनिसिपेलटियों के लिये कोई वार्षिक देनगी नियत नहीं है; हां कुछ प्रांतों, के शिक्षा, अस्पताल व पशुचिकित्सा के कार्य में आवश्यकता होने पर प्रांतिक सरकार आर्थिक सहायता देती है। इसी प्रकार जब किसी म्यूनिसिपेलटी को मैले पानी के बहाव के लिये नालियां

बनानी होती हैं, अथवा जल-प्रबन्ध का ऐसा कार्य करना होता है जो उसके संचित धन से न हो सके, तो प्रान्तिक सरकार उसके खर्च में हाथ बटाती है। कभी कभी भारत सरकार प्रान्तिक सरकारों को म्यूनिसिपेलटियों के निमित्त खास रकम प्रदान करती है।

संख्या और आय व्यय—ब्रिटिश भारत के भिन्न २ प्रान्तों में कारपोरेशनों सहित म्युनिसिपैलिटियों की सन् १६१६-२० ई० की संख्या तथा उनकी आय और व्यय आगे दिये हुये नक्शे से विदित होगा। * विदित हो कि उनकी कुल आय का ३८ फी सदी रुपया कलकत्ता, मद्रास, बम्बई और रंगून, इन चार शहरों से ही वसूल होजाता है।

---

* खेद है कि नवम्बर सन् १९२१ ई० तक भी हमें इस विषय की सरकारी रिपोर्ट (Statistics of British India; Vol., IV.) का नया संस्करण न मिल सका। इस से विवश हो, हम सन् १९१९-२० ई० के बाद के अंक नहीं दे सके। —लेखक

प्रान्त	म्युनिसिपैलटियों की संख्या	आय (हज़ार रु० में)	व्यय (हज़ार रु० में)
बङ्गाल	११६	२,१५,३६	२,२०,३२
मद्रास	७४	१,३५,०५	१,३० १२
बम्बई	१५८	३.३३,२७	३,४५,७०
संयुक्त प्रान्त	८४	१,१४,७८	१,०७,१३
बिहार उड़ीसा	५८	३४,६७	३४,५७
पञ्जाब	१०१	१,०६,२६	९७,१६
देहली	१	१७,११	२०,७७
बर्मा	४७	१,०२,६३	६२,६७
मध्यप्रान्त बरार	५६	४१,१५	४२,८८
आसाम	२५	६,८६	६,४१
पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त	६	१३,४४	१०,६४
अजमेर मेरवाड़	३	४,५१	४,१५
बलोचिस्तान	१	४,६२	४,०३
कूर्ग	५	३७	४४
बंगोलर	१	६,६३	६,७३
योग	७३६	११,४१,०४	११,२६,३२

आय व्यय की मद्दें—आगे दिये हुए नकशे से यह मालूम हो जायगा कि मुख्य मुख्य प्रान्तों में म्यूनिसिपैल्टियों और कारपोरेशनों की आय और व्यय की मद्दें कौन कौन सी हैं और उनमें सन १९१९—२० ई० में आय और व्यये, कुल रकम के किस किस अनुपात से हुआ है—

आय की मद्द	आय फीसदी	व्यय की मद्द	व्यय फीसदी
मकान और भूमि का कर	२१.०	सफाई	१७.३
चुंगी (वास्तविक)	१६.०	सावजनिकनिर्माणकार्य सड़क मकानातआदि	१४.२
पानी का महसूल	१० ६	व्यवस्था और आय प्राप्ति का व्यय	८.६
सफ़ाई का कर	६.३	ऋण का सूद	७.०
पशु और गाड़ियां	२.१	नालियां धोना	५.८
व्यापार धन्धे	२.०	पानी के नल आदि	६.१
सड़क और नाव	२.०	अग्नि, रोशनी पुलिस	५.८
रोशनी का महसूल	१.६	अस्पताल औरटीका	५.३
अन्य कर	४.३		
म्युनिसिपैलिटियोंकी सम्पत्ति और अधि-कारों से प्राप्त आय	१७.७	शिक्षा	८.१
दान, सहायता आदि	१६.१	विविध	१८.८
योग	१००.०	योग	१००.०

जन संख्या—सन् १९१९—२० ई० में कुल म्युनिसिपैलिटियों और कारपोरेशनों की सीमा में १ करोड़ ७० लाख से अधिक अर्थात् ब्रिटिश भारत की कुल जन संख्या के लगभग ७ फीसदी आदमी रहते थे। ५५६ म्युनिसिपैलिटियों और कारपोरेशनों में बीस बीस हज़ार से कम, और शेष १६३ में बीस बीस हज़ार या अधिक आदमी थे।

कर की मात्रा—म्युनिसिपैलिटियों और कारपोरेशनों की सीमा में प्रत्येक आदमी पर म्युनिसिपल कर की औसत सन् १९१९—२० ई० में सवा चार रुपये थी। भिन्न भिन्न क्षेत्रों में यह मात्रा पृथक् पृथक् है और कारपोरेशनों में बहुत अधिक है, उदाहरणार्थ बम्बई शहर में, १६ रु० ६ आने, बम्बई प्रान्त में (बम्बई शहर छोड़ कर) ३ रु० ६ आने, संयुक्त में २ रु० ५ आने; बिहार उड़ीसा मे १ रु० ६ आने।

म्युनिसिपैलिटियों और कारपोरेशनों पर लगभग १५ करोड़ रुपये का ऋण है। इस ऋण का अधिकांश भार बम्बई और कलकत्ते को कारपोरेशनों पर है।

नोटीफाइड एरिया—इन्हें म्युनिसिपैलिटियों के थोड़े थोड़े से अधिकार होते हैं। ये उसी क्षेत्रफल में होते हैं, जहां बाज़ार या क़स्बा अवश्य हो, और जन संख्या दस हज़ार से अधिक न हो। इनकी संख्या और सन् १९१९-२० ई० की आय और व्यय आगे दिये नक्शे से मालूम होगा।

प्रान्त	संख्या	आय (हजार रु० में)	व्यय (हज़ार रु० में)
बर्मा	२१	८६४	७८१
पंजाब	१०७	६८५	८०४
संयुक्त प्रान्त	४६	४६०	४७४
देहली	५	३८४	४८८
मध्य प्रान्त वरार	१०	१६२	१५४
बम्बई	२७	३७२	३७६
पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त	८	१२३	१२३
योग	२२७	३३८०	३१२३

बोर्ड देहातों में स्थानीय स्वराज्य का आरम्भ म्यूनिसिपेल टियों के स्थापित होने के बहुत दिनों बाद हुआ। यहां स्वास्थ्य, सफ़ाई प्रारंभिक शिक्षा तथा औषधादि का प्रबंध रखने के उद्देश्य से 'बोर्ड' संगठित किये गये हैं। इनके अधिकार तथा आय यथेष्ट न होने से इनका कार्य भी बहुत परिमित है। इनका शुभ सूचक श्री गणेश, लार्ड मेओ व रिपन के समय में हुआ था अभीतक यथेष्ट उन्नति नहीं हुई।

हर एक जिले में एक बोर्ड रहता है प्रायः उसके अधीन दो या अधिक अधीन ज़िला बोर्ड होते हैं। बंगाल, मद्रास और बिहार उडीसा में यूनियन कमेटियां या पंचायते भो हैं।

भारतवर्ष में २०० ज़िला बोर्ड, और उनके अधीन ५३२ अधीन ज़िला बोर्ड है। इनके अतिरिक्त १०५१ यूनियन कमेटिया हैं। बोर्डों की सीमा में २१ करोड़ तीस लाख आदमी रहते हैं। बोर्डों के मेम्बरों की संख्या सन् १६१६—२० ई० में १२५७१ थी, इनमें से ७,१३१ (अर्थात् ५७ फ़ीसदी) निर्वाचित और ३,७७१ नामज़द और १,६६६ अपने पद के कारण मेम्बर थे।

बोर्डों की आय व्यय—प्रायः देहातों में फी घर कुछ हल्का सा टेक्स वसूल किया जाता है। वह स्वास्थ सम्बन्धी कामों में व्यय किया जाता है। अधिकतर आय उस महसूल से होती है जो भूमि पर लगाया जाता है और जो सरकारी वार्षिक लगान के साथ ही प्रायः एक आना फ़ी रुपये के हिसाब से वसूल कर के इन बोर्डों को दे दिया जाता है। इसके अतिरिक्त विशेष कार्यों के लिये सरकार कुछ रक़म प्रदान कर देती है। आय के अन्य श्रोत तालाब, घाट, सड़क पर के महसूल हैं। (आसाम प्रान्त को तोड़कर) अधीन ज़िला बोर्डों का कोई स्वतंत्र आय श्रोत नहीं, उन्हें समय समय पर जिला बोर्डों से ही कुछ मिल जाता है।

सन् १६१६—२० ई० में बोर्डों की कुल आय ६२६ लाख रुपये हुई। प्रत्येक ज़िला बोड़ की (उसके अधीन ज़िला बोर्ड

सहित) आय की औसत पांच लाख २२ हज़ार रु० थी। आसाम में ज़िला बोर्ड नही हैं, वहां के आधीन ज़िला बोर्डों का औसत आय १ लाख ३२ हज़ार रुपये थी। उक्त वर्ष में बोर्डों का कुल व्यय ७७० लाख रुपये हुआ। देहातों की जन संख्या और क्षेत्रफल देखते हुए, उनकी आय व्यय बहुत कम है, यही कारण है कि भारत वर्ष में स्थानीय स्वराज्य से पूर्ण लाभ नहीं हुआ है।

नोटः—आगे दिये हुए नक़्शे से यह मालूम हो जायगा कि मुख्य २ प्रान्तों के बोर्डों में किन किन मद्दों में आय और व्यय कुल रक़म के किस अनुपात से हुआ।

आय की मद्द	आय फीसदी	व्यय की मद्द	व्यय फीसदी
प्रान्तीय महसूल	३६.१	सिविल निर्माणकार्य	३९.५
पुलिस	२.७	शिक्षा	३८.२
शिक्षा	२०.६	स्वाथ्य और चिकित्सा	१३.७
सिविल निर्माण कार्य	१६.६	प्रबन्ध	२.५
विविध	२४.०	विविध	६.१
योग	१००	योग	१००

पोर्ट ट्रस्ट—अदन (जो शासन प्रबंध के लिये बंबई प्रांत में समझा गया है), कलकत्ता बंबई मद्रास, चटगांव, करांची और रंगून बंदरों का स्थानिक प्रबंध करने वाली संस्थाए पोर्ट ट्रस्ट कहाती हैं। ये ट्रस्ट घाटों पर माल गोदाम बनाते हैं और व्यापार के सुभीते के अनुसार नाव और जहाज़ की व्यवस्था करते हैं समुद्र तट, नगर के पास समुद्र भाग या नदी पर इन का पूरा अधिकार रहता है। इनकी पुलिस अलग रहती है। ट्रस्ट के सभासद् कमिश्नर या ट्रस्टी कहाते हैं। सभासदों में चेम्बर आफ़ कामर्स जैसी व्यापार संस्थाओं के प्रतिनिधि होते हैं। कलकत्ते और करांची में म्यूनिसिपेलटियों के प्रतिनिधि भी इनमें लिये जाते हैं। कलकत्ते के अतिरिक्त सब पोर्ट ट्रस्टों में निर्वाचित मैंबरों की अपेक्षा नामजद ही अधिकतर होते हैं अधिकांश मेम्बर यूरोपियन हैं। म्यूनिसिपेलटियों की अपेक्षा पोर्ट ट्रस्टों में सरकारी हस्तक्षेप अधिक है। ये ही ऐसी स्वराज्य संस्थाएं हैं जिनके सभासदों को कुछ भत्ता मिलता है। माल की लदाई उतराई, गोदाम के किराए तथा जहाज़ों के कर से जो आमदनी होती है वही इनकी आय है। इन्हें आवश्यक कार्य्यों के लिये कर्ज लेने का अधिकार है। सन् १९१९-२० में ट्रस्टों की कुल आय व्यय और ऋण कितना था, यह आगे दिये हुए नक्शे से विदित हो जायगा—

पोर्ट ट्रस्ट	आय लाख रु०	व्यय लाख रु०	ऋण लाख रु०
कलकत्ता	२२३	२२५	१००३
बम्बई	२०२	१६३	१५८४
मद्रास	२५	२२	१३७
करांची	४७	५२	२५७
रंगून	५२	४५	२६६
चटगांव	१८	६	५

पिछले दस वर्षों में इन पोर्ट ट्रस्टों की आय ८६ फी सदी और व्यय ९२ फी सदी बढ़ा है।

स्थानीय राजस्व और सुधार योजना—सुधार योजना के रचयिताओं ने स्थानीय स्वराज्य संस्थाओं के सुधार का उत्तरदायित्व प्रान्तीय शासकों तथा सुधरी हुई व्यवस्थापक परिषदों पर छोड़ कर कुछ प्रस्ताव मात्र किये हैं। उनके स्थानीय राजस्व सम्बन्धी प्रस्तावों का सारांश इस प्रकार है—

१—म्यूनिसिपिल बोर्डों को कानून द्वारा निर्दिष्ट सीमा के अन्दर कर लगाने व कर बदलने का अधिकार हो। परन्तु ऋणग्रस्त बोर्ड कर बदलने में उच्च अधिकारी की आज्ञा लें।

जुलती दशा दूसरे प्रान्तों की है। क्या यही प्रान्तिक स्वराज्य (Proviucial Antonomy) है ?

स्थानीय स्वराज्य संस्थाओं पर दृष्टि डालें; प्रथम तो इनकी आर्थिक शक्ति ही अपेक्षा-कृत बहुत क्षुद्र सी है। पुनः ट्रस्ट अर्ध-सरकारी स्वीकार ही किए जाते हैं, कारपोरेशनों के आय व्यय में भी सरकार का बहुत कुछ हस्तक्षेप है। म्युनिसिपलिटियों और बोर्डों में सिद्धांत से स्वराज्य होने पर भी कलेकृर आदिकों की उनमें भी ख़ूब चलती है।

इन सब बातों से हमारी आर्थिक पराधीनता का स्पष्ट प्रमाण मिलता है। हमें विदेशी माल पर कर लगाने का अधिकार नहीं। इससे मैंचेस्टर तथा लंकाशायर के व्यापारियों का नुक़सान होगा। हां, हमें उनका स्वार्थ सिद्ध करने के लिए अपनी मिलों के सूत पर टैक्स अवश्य स्वीकार करना पड़ता है। सरकार यहां से अन्न बाहर भेज दे, तो उसे बंद नहीं कर सकते। यदि वह हमारे नमक पर टैक्स दूना कर दे, तो हम कुछ शोर मचाने के अतिरिक्त कोई क़ानूनी अधिकार नहीं रखते। हमारी पुकार सुनना-न-सुनना गौरांग प्रभुओं की कृपा पर निर्भर है। हमारी गोल्ड स्टैंडर्ड रिजर्व आदि की करोड़ों रुपये की रक़म भारत-मंत्री के पास जमा रहती है, उससे इंगलैंड के बड़े बड़े बैंक और धनी व्यापारी लाभ उठाते हैं; निर्धन भारत अपने ही कोष का उपयोग नहीं कर सकता।

यहां शिक्षा और स्वास्थ-प्रबन्ध के लिये धन नहीं, उद्योग-धंधों की उन्नति के साधन नहीं।

इसका परिणाम आर्थिक दुर्दशा—वर्तमान शासक-पद्धति का मूल-मंत्र इंगलैंड का हित है, फिर चाहे भारतवर्ष को उससे कितनी ही हानि क्यों न हो। परवशता और पराधीनता से होने वाला अवश्यंभावी दुष्परिणाम देश का आत्मिक पतन है। इस बात का उल्लेख हम अपने 'भारतीय राष्ट्र-निर्म्माण' में कर चुके हैं। यहां उसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध न होने से, उसे छोड़ भी दें, तो हमारी इस समय आर्थिक दुर्दशा ही क्या थोड़ी है? यदि हम अपनी जबान से उसका वर्णन न भी कर सकें, तो हमारे चेहरे और हमारे शरीर उसे हर समय करते ही रहते हैं। वीर प्रसविनी भारत-भूमि के पुत्रों में कोमलता, कायरता और निर्जीवता देख कर कौन सहृदय दो आंसू न बहावेगा? जो लोग ब्रिटिश शासन के अमन-चैन पर मुग्ध हैं, वे तस्वीर का दूसरा पहलू भी देखें। बच्चे, बूढ़े, रोगियों और निर्बलों के लिये देश में दूध का भयंकर अभाव है; गौओं का शोचनीय हाल हो रहा है। इसका उत्तरदाता कौन है? पुनः यह अब कोई रहस्य नहीं है कि 'हिन्दुस्थान के लाखों मनुष्यों को दोनों वक्त खाने को नहीं मिलता, और उनसे भी अधिक वे लोग हैं, जो हमेशा कम खाने से शरीर-पोषण-योग्य खुराक नहीं पाते—पा नहीं सकते। इसके सिवा दिन दिन भूकों मरते हुए

हिन्दुस्तान के भीतर लाखों गांवों में कितने गरीब होंगे, यह कौन कह सकता है।' इस परिस्थिति का जिम्मेदार कौन है? क्या ब्रिटिश-शासन के भयंकर खर्च के लिये वसूल किये जाने वाले नये नये टैक्स, सेना और सूद आदि में इतना अधिक खर्च हो जाना कि शिक्षा, स्वास्थ और उद्योग-धंधों के लिये केवल नाम-मात्र की रक़म रह जावे, बड़ी बड़ी सब नौकरियाँ विदेशियों को देना और भारत-संतान को अपने ही देश में परदेशी की तरह रखना उक्त परिस्थिति के कुछ कारण नहीं है?

आर्थिक स्वराज्य की आवश्यकता—उक्त शोचनीय परिस्थिति का इलाज क्या है? आर्थिक पराधीनता दूर हो, और आर्थिक दृष्टि से तो हमें स्वराज्य अवश्य ही मिल जावे। इसका अभिप्राय यह है कि भारत-सरकार, प्रान्तिक सरकार और स्थानीय संस्थाओं—सब का आय-व्यय भारतीय प्रतिनिधियों के अधिकार में रहे। वे भारतवर्ष के हित को लक्ष्य में रख कर चाहे जिस खर्च में कमी करें, और चाहे जिस पदार्थ पर टैक्स लगावें। इस समय शासक भारत-मंत्री और ब्रिटिश पार्लियामेंट के प्रति उत्तरदायी हैं और भारतवर्ष के खजाने से वेतन पाते हुए भी स्वभावतः वे इंगलैंड का हित-साधन करने की चिन्ता में रहते हैं। यह न होकर उन सब को भारतीय जनता के प्रति उत्तरदायी होना चाहिए। भारत-सरकार और प्रांतिक सरकारों को इस समय लगभग २२५ करोड़ रुपयों की वार्षिक आय है, इसमें एक चौथाई से भी कम पर भारतवा-

सियों को यथेष्ट अधिकार प्राप्त हैं। यह बात शीघ्र दूर होनी चाहिए। न्याय की बात यह है कि इस रक़म में से पाई पाई पर भारतीय जनता के प्रतिनिधियों का अधिकार हो। पुनः गोल्ड-स्टैंडर्ड रिजर्व आदि का सब कोष सात समुद्र पार इंगलैंड में न रह कर भारत में रहना चाहिए, और उससे भारत का हित साधन होना चाहिए।

स्वराज्य और टैक्स—राज्य प्रबन्ध के लिये टैक्स तो सदैव ही देने पड़ेंगे, परन्तु अपना राज्य होने की दशा में उनका परिमाण, वसूल करने का ढंग तथा उन्हें खर्च करने की व्यवस्था आदि प्रत्येक बात में सार्वजनिक हित का ध्यान रखा जायगा।

देशबन्धु दास के मसविदे में यह प्रबन्ध किया गया है कि अधिकतर शासनाधिकार स्थानीय पंचायतों को ही होगी, अपने अपने इलाकों के लिये ये ही कानून बनावेंगी, और उनसे ये ही कर वसूल करेंगी। ग्राम्य और नगर पंचायतें सब कर एकत्र करके उसका निर्धारित अंश ऊपर की पंचायतों को देंगी।

इस समय म्युनिसिपल-बोर्ड अलग, प्रांतीय सरकार अलग, और भारत सरकार अलग, उन्हीं प्रजा जनों से बीस प्रकार के व्याज रच कर बार बार कर वसूल करती है। कर-दाता को कितनी सुविधा हो जाय, यदि वह एकमुश्त एक बार सब के लिये कर दे दें और भिन्न भिन्न शासन-संस्थाएं आपस में उस का उचित विभाग कर लें। कर वसूल करने के लिये जो व्यर्थ के असंख्य कर्मचारी रहते हैं, उनकी कोई आवश्यकता न रह

जायगी। इस बात का भय करना बिलकुल निर्मूल है कि स्थानीय संस्थाएं रुपया वसूल करके किसी को न देंगी। इस समय भी भारत-सरकार का काम बहुत कुछ प्रांतों के दिये हुये रुपए से ही चलता है।

हमारी आर्थिक उन्नति—जब स्वराज्य ही हमारा जन्म-सिद्ध अधिकार है, तो आर्थिक स्वराज्य तो उसका एक अंश ही है। इसकी चाह कोई अनोखी बात नहीं है। हम अपने देश को—अपने भाई-बहिनों की—आर्थिक उन्नति चाहते हैं, यह आर्थिक स्वराज्य बिना कठिन ही नहीं, असंभव है। आर्थिक स्वराज्य पाकर हम अपने आदमियों को सैनिक शिक्षा देकर ऐसे नवयुवक हर समय तैयार रखेंगे, जो जरूरत के समय स्वयं देश-प्रेम की लहर में देश की रक्षा करें। हम स्थायी सेना बहुत कम रखेंगे और उसमें केन्द्रीय (भारत सरकार की) आय का आधे से अधिक स्वाहा न करके उसमें बहुत बचत करेंगे, और उससे अपने बहुत से उपयोगी कार्य निकालेंगे। अन्यान्य बातों में हम अपने देश से अविद्यांधकार को दूर भगा देंगे। मंहगी, रोगों और व्याधियों का मुंह काला कर देंगे। कृषकों पर भूमि-कर का भार कम करके हम उन्हें सुख से पेट भर रोटी खाने देंगे। उद्योग-धंधों को उन्नति के यथेष्ट साधन करके हम अपने इधर-उधर बृथा भटकने वालों के लिये आजीविका-प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त करेंगे। इस प्रकार आर्थिक स्वराज्य से देश में सुख शान्ति का राज्य होगा।

भारतीय ग्रन्थमाला

संक्षिप्त इतिहास और उद्देश्य-प्रेमी और जिज्ञासु पाठकों के लिये यहां भारतीय ग्रन्थमाला सम्बन्धी कुछ मुख्य मुख्य बातें लिखी जाती हैं ।

एफ० ए० पास करने के तीन साल बाद सन् १९१३ ई० में बी० ए० की पढ़ाई आरम्भ करने का हमारा एक उद्देश्य राजनीति (इतिहास) और अर्थ शास्त्र अध्ययन करना था । उक्त वर्ष के अन्त में हम ने 'माहेश्वरी' पत्र के लिये 'हमारे पाठ्य विषय' शीर्षक एक लेख माला * लिखी, उसमें अन्यान्य विषयों में उपर्युक्त विषयों का महत्व और इनका दूसरों से सम्बन्ध दर्शाया। बी० ए० में इन विषयों की शिक्षा और उक्त लेखमाला का अनुभव प्राप्त करते हुए, यह निश्चय किया गया कि इन विषयों पर कुछ पाश्चात्य एवं भारतीय विचार हिन्दी भाषा में पुस्तक रूप से प्रकट किये जांय । अस्तु, परीक्षा देते ही सन् १९१५ ई० में भारतीय ग्रन्थमाला का श्री गणेश करने वाली 'भारतीय शासन' पुस्तक की रचना की गयी। सुहृदों की कृपा से उसके प्रकाशित हो जाने पर आगे के लिए उत्साह-वृद्धि हुई। परिस्थिति अनुसार नयी नयी रचनाओं का प्रयत्न होता रहा । समय समय पर अन्य मित्रों से भी साहित्य कार्य में योग देने के लिये अनुरोध किया गया। इस समय

---

* यह लेख माला हमारी 'भारतीय विद्यार्थी विनोद' पुस्तक में संकलित है।

तक जो थोड़ा बहुत कार्य बन आया है, वह पाठकों के सन्मुख है।

भावी कार्य क्रम—हमने 'भारतीय राष्ट्र 'निर्माण' (प्रथम संस्करण) की प्रस्तावना में कहा था कि भारतीय ग्रंथ-माला के सम्बन्ध में "भविष्य के लिए हमारी आकांक्षा इतनी बढी हुई है कि उस की कुछ निश्चित रुप से विज्ञप्ति देने में संकोच होता है। प्रेमी पाठक इतनाही जान कर सन्तोष करें कि हमारे मन में जन्म भूमि की जागृति सम्बन्धी नवीन लहरों का उदय हो रहा है, हम अपने देश की महान आवश्यकताओं और विशाल उत्तरदायित्व का विचार कर रहे हैं, संसार में भारतवर्ष का क्या स्थान तथा कर्तव्य है, यह सोच रहे हैं, भारत माता के दीन हीन होते हुए भी भारतीय सभ्यता अभी तक किस उद्देश्य पूर्ति के लिए जीवित है, अथवा जगत की अधिकांश दुखी जनता के लिये इसे क्या कल्याणकारी संदेशा देना है, इसका चिन्तन व मनन कर रहे है। परमात्मा की कृपा हुई और सुहृदों की सहायता मिली तो हम अपनी वर्ष गांठ के साथ साथ इस ग्रन्थ माला में उपर्युक्त भावों से पूरित एक एक दो दो दाने जोड़ते रहेंगे।" इससे अधिक कुछ और कह कर हम पाठकों को वृथा बडी २ आशायें दिलाना नहीं चाहते।

आप क्या सहायता कर सकते हैं?-इस सम्बन्ध में आप के विचारार्थ हमारा साधारण वक्तव्य इस प्रकार है :—

(१) कुछ महाशयों ने हमें भिन्न भिन्न पुस्तकों के प्रकाशन में आर्थिक सहायता दी है, आप भी अपनी शक्ति और भावना के अनुसार सहायता कर सकते हैं, इसके उपलक्ष

में जिस संस्था को आप कहेंगे उसे उतनी रकम तक की पुस्तकें प्रदान की जावेंगी ।

(२) हमारी पुस्तकें राष्ट्रीय एवं सरकारी कई संस्थाओं के लिये स्वीकृत हैं । अन्य संस्थाओं के अधिकारियों को भी चाहिये कि वे अपने यहां इन्हें जारी करके अथवा पारितोषिक में देकर प्रचार-कार्य में योग दें ।

(३) साधारण पाठकों को चाहिये कि वे हमारी जिस पुस्तक को अवलोकन करें उसका अपने सहवासी मित्रों में प्रचार करें। इस प्रकार साधारण स्थिति के व्यक्ति भी हमें बहुत सहायक सिद्ध होंगे ।

(४) भिन्न २ विद्वान हमारी रचनाओं के सम्बन्ध में अपना मत प्रकाशित करें और उनमें आगामी संस्करणों के लिये संशोधन या सुधार की बातें बतलावें तथा किस विषय की पुस्तक की रचना में वे अपने सुविचारों से हमारी सहायता कर सकते हैं, यह सूचित करें ।

(५) यदि आप पुस्तक-विक्रेता हैं तो अन्यान्य उपयोगी ग्रन्थों के साथ "भारतीय ग्रन्थमाला" की पुस्तकों के भी प्रचार का प्रयत्न करें। यथोचित कमीशन दिया जायगा ।

अब आप अपनी परिस्थिति के अनुसार यह निश्चय करलें कि आप इस शुभ कार्य में क्या योग दे सकते हैं ।

विनीत

भगवानदास केला

लेखक की रचनायें; भारतीय ग्रन्थमाला

संख्या	पुस्तक	सन्	संस्करण	प्रतियां	विशेष वक्तव्य
१	भारतीय शासन	१९१५	पहिला	एक हज़ार	(क) मध्य प्रान्त और बरार के हाई-स्कूलों की पाठ विधि में सम्मिलित और नार्मल स्कूल-पुस्तकालयों के लिये स्वीकृत । (ख) बड़ोदा राज्य के स्कूल-पुस्तकालयों के लिये स्वीकृत ।
	"	१९१९	दूसरा	एक हज़ार	(ग) हिन्दी साहित्य सम्मेलन की प्रथमा परीक्षा की पाठ विधि में सम्मिलित ।
	"	१९२२	तीसरा	एक हज़ार	(घ) संयुक्त प्रान्त के वर्नाक्यूलर और ऐङ्गलो-वर्नाक्यूलर स्कूल-पुस्तकालयों के लिये सिफारिश की गयी । (च) कई स्कूलों, विद्यालयों, स्थानीय प्रेम महाविद्यालय और गुरुकुल का पाठ विधि में सम्मिलित ।

२	'भारतीय विद्यार्थी विनोद' या "हमारे पाठ्य और विचारणीय विषय"	१९१६	पहिला	डेढ़ हज़ार	(क) मध्य प्रान्त और बरार के वर्नाक्यूलर, ऐङ्गलो वर्नाक्यूलर, मिडिल, हाई, और नॉमल स्कूलों के पुस्तकालयों के लिये, एवं पारितोषिक के लिये स्वीकृत।
		१९१८	दूसरा	डेढ़ हज़ार	(ख) बड़ौदा राज्य के स्कूल-पुस्तकालयों के लिये स्वीकृत।
					(ग) प्रेम महाविद्यालय की पाठ विधि में सम्मिलित !
३	भारतीय राष्ट्रनिर्माण	१९१९	पहिला	एक हज़ार	कुछ राष्ट्रीय संस्थाओं द्वारा अपनायी गयी।
	"	१९२३	दूसरा	एक हज़ार	

४ ५	मातृ वन्दना ; अन्योक्ति तरङ्गिणी	१६१६ ,,	पहिला ,,	एक हज़ार ,,	पं० ईश्वरी प्रसाद जी अलीगढ़, रचित मनोहर, देश भक्तिपूर्ण और शिक्षाप्रद पद्य रचनायें।
६	भारतीय जागृति	१६२०	पहिला	एक हज़ार	प्रेम महाविद्यालय की पाठ विधि में सम्मिलित।
७	देशभक्त दामोदर	१६२०	पहिला	डेढ़ हज़ार	मारवाड़ी शिक्षा मण्डल से १२५) पुरष्कार प्राप्त।
×	भारतीय अर्थशात्र	१६२३	पहिला	दो हज़ार	प्रेम महाविद्यालय की पाठविधि में सम्मिलित।
८	भारतीय चिन्तन	१६२३	पहिला	एक हज़ार	अभी छपी है।
६	भारतीय राजस्व	१६२३	पहिला	दो हज़ार	अभी छपी है।

पाठकों की सूचनार्थ हमारी पुस्तकों का संक्षिप्त परिचय उन की विषय सूचि तथा उन पर आयी हुई मुख्य मुख्य समालोचनाओं का सारांश आगे दिया जाता है :—

भारतीय शासन (तीसरा संस्करण); इस की उपयोगिता और सर्वप्रियता का एक प्रमाण यही है कि थोड़े से समय में इस का तीसरा संस्करण प्रकाशित हो चुका। यह पुस्तक कई स्कूलों और राष्ट्रीय विद्यालयों में पढ़ायी जाती है। अन्य संस्थाओं में भी जारी होनी चाहिये। प्रत्येक नागरिक के लिए यह जानना अत्यन्त आवश्यक है कि उसके भक्ति-भाजन स्वदेश में राज्य की कल किस प्रकार चलती है। पृष्ठ संख्या १६८ ; मूल्य ॥|≈) मात्र।

विषय सूची—१–ऐतिहासिक उपोद्घात, २–इंगलेंड की राज्य व्यवस्था, ३–भारतीय शासन नीति विकास, ४–भारत मंत्री और इण्डिया कौंसिल, ५–भारत सरकार, ६–भारतीय व्यवस्थापक विभाग, ७–प्रान्तिक सरकार, ८–प्रान्तिक व्यवस्थापक, परिषदें ९–जिले का शासन, १०–स्थानीय स्वराज्य, ११–सरकारी आय व्यय, १२–देशी रियासतें, १३–भारतीय सेना, १४–पुलिस और जेल, १५–क़ानून और न्याय, १६–शिक्षा प्रचार, १७–स्वास्थ रक्षा, १८–सार्वजनिक कार्य।

"बड़ी अच्छी पुस्तक है, सामयिक है, शासन से सम्बन्ध रखने वाली बातों का स्थूल ज्ञान प्राप्त करने के लिये आइने का काम देने वाली है"। —"सरस्वती"

—वास्तव में यह पुस्तक साधारण लोगों के लिये राजनैतिक नेता, विद्यार्थियों के लिए शिक्षक, राजनीतिज्ञों के लिए ज्ञान वर्द्धक और सम्पादकों के लिये सुवर्ण-अङ्कों का संदूक है।

—"हिन्दी" (दक्षिण अफ्रीका)

-वर्तमान भारतीय शासन पद्धति का ज्ञान प्राप्त करने के

लिये हिन्दी भाषा में इससे उच्चतर अन्य कोई पुस्तक अभी तक प्रकाशित नहीं हुई। —'जयाजी प्रताप'

भारतीय विद्यार्थी विनोद (दूसरा संस्करण); भारतीय विद्यर्थियों—भावी विद्वानों और देश सेवकों के लिये यह पुस्तक बहुत ही उपयोगी है। इसमें मुख्य मुख्य पाठ्य विषयों की आलोचना, उन का महत्व और पारस्परिक सम्बन्ध तथा कई विचारणीय विषयों पर उपयोगी विचार हैं। पृष्ठ संख्या, परि शिष्ट के अतिरिक्त ६२, मूल्य ।≈) मात्र।

विषय सूची—प्रथमखंड—हमारे पाठ्य विषय, –१भाषा, २--गणित, ३--विज्ञान, ४--भूगोल, ५--इतिहास, ६--सम्पत्ति शास्त्र, ७--नीति, ८--तर्क शास्त्र। दूसरा खंड--विचारणीय विषय, १--भारत वर्ष में राष्ट्र-भाषा का प्रश्न २-मातृ भाषा से प्रेम, ३--हमारी मातृ भाषा, ४--हमारी आदतें, ५- आत्मोन्नति, ६--आजकल के पाहुने, ७--मानवी सुख दुःख पर एक दृष्टि, ८--जीवन यात्रा।

पुस्तक नये ढंग की और योरोपीय उदाहरणों से विभूषित उत्तेजनाकारक है। ऐसी ऐसी पुस्तकों की आवश्यकता भी है।

सम्मेलन-पत्रिका

राष्ट्र भाषा में ऐसी पुस्तक का प्रकाशित होना राष्ट्र भाषा के सौभाग्य का सूचक है। —'चांद'; अप्रेल, मई १९१९

भारतीय राष्ट्रनिर्माण (दूसरा संस्करण) इस समय चहुं ओर राष्ट्रीयता की लहर चल रही है। क्या भारतवर्ष को भी राष्ट्र बनना चाहिये ? वह राष्ट्र किस प्रकार बन सकता है ? स्वाधीनता और स्वालम्बनके क्या क्या उपाय हैं ? भारतवर्ष को जगत में क्या महान उद्देश्य पूरा करना है, इन बातों को जानने और प्रस्तुत राष्ट्रीय समस्याओं को शान्ति व गम्भीरता पूर्वक विवेचन करने के लिये इस पुस्तक का पठन व

मनन आवश्यक है। लगभग दो सौ पृष्ठ की पुस्तक का मूल्य ||=) मात्र।

विषय सूची—प्रथम खंड--विषय प्रवेश; १--राष्ट्र की उत्पत्ति, २--भारतीय राष्ट्र की आवश्यकता, ३--भारतवर्ष की एकता। दूसरा खंड--हमारा समाज बल; १--भारतीय जनता, २--सदाचार, ३--शिक्षा, स्वास्थ और आजीवका, ४--संगठन--स्त्रियां, दलितोद्धार, और शुद्ध, ५--भारतीय हिन्दू मुसलमान। तीसरा खंड--राष्ट्रीयता के भावों का विकास, २--राष्ट्र--प्रेम और सेवा, २--राष्ट्रीय शिक्षा, ३--राष्ट्रीय साहित्य, ४--राष्ट्रीय झंडा। चौथा खंड--स्वाधीनता, कांग्रेस और स्वराज्य आन्दोलन, २--सत्याग्रह और असहयोग।

–इस में बहुत ही योग्यता और स्वतन्त्रता से विचार किया गया है। भाषा सरस है। '–ललिता,

——निस्संदेह भारतीय राष्ट्र निम्मार्ण की बड़ाभारी सामग्री का समावेश इस छोटी पुस्तक में कर के लेखक ने मानों गागर में सागर भर दिया है। —'मारवाड़ी'

मातृ वन्दना—श्री० ईश्वर कवि रचित इस पुस्तक में सात दर्शन हैं और मातृ—भूमि के प्रति अगाध भक्ति का भाव उत्पन्न करने वाली, पूजा पाठकी समुचित सामग्री है। प्रेमी भारत सन्तान, एक बार इसका आनन्ददायी पाठ तो कीजिये। पृष्ठ सख्या ८६; मूल्य ||) मात्र।

अन्योक्ति तरंगिणी—श्री० ईश्वर कवि प्रणीत इस रचना की सात तरंगों में ८१ अन्योक्तियां हैं। गाने वालों के लिए गान की सामग्री है, पुरातन कविता प्रेमियों के लिए उस ढंग की रचना का समावेश है, भक्तों के लिए भक्ति का साधन और समालोचकों के लिए विवेचना का स्थल है। पृष्ठ संख्या ६६। मूल्य।) मात्र।

भारतीय जागृति—इस पुस्तक में गत शताब्दि के भारतीय इतिहास के विविध अङ्गों के वर्णन के साथ साथ आधुनिक परिस्थिति के लिये विचार करने की बहुत कुछ सामग्री है। इसे अवलोकन कर आप अपने महान कर्तव्य का पालन कीजिये भारतीय जगृति संसार के कल्याण का संदेश है। पृष्ठ संख्या दो सौ से अधिक; मूल्य १) मात्र।

विषय सूची—१—जागृति के कुछ सिद्धान्त, २—भारतीय जागृति का सामान्य विवेचन, ३—धार्मिक पुनरुत्थान, ४—समाज सुधार ५—कृषि कथा, ६—औद्योगिक विवरण, ७—शिक्षा प्रचार, ८—साहित्य-वृद्धि, ९—राजनैतिक विकास, १०—भारतीय ध्येय।

—इस पुस्तक में केलाजी ने विविध प्रकार की जागृति का सजीव चित्र खींचा है। —'ज्योति'

—देश को आज ऐसेही सहित्य की जरूरत है।—'छात्र सहोदर'

—पुस्तक युवकों के ही लिये हीं, वरन नये हिन्दी लेखकों केन लिए भी बड़ा काम दे सकेगी। —'चित्रमय जगत'

देशभक्त दामोदर—यह स्व० सेठ दामोदर दासजी राठी, ब्यावर, का जीवन चरित्र है। सेठ जी केवल ३५ वर्ष की आयु में देश भक्ति और जाति हित के अनेक कार्य कर गये हैं। इसे पढ़कर आप अपने जीवन को उच्चऔर उपयोगी बनाने की शिक्षा ग्रहण करें। पृष्ठ संख्या १२०; प्रचारार्थ मूल्य ॥) मात्र।

विषय सूची—१—श्री० राठी जी के पूर्वज, २, श्री० दामोदर बाल प्रभा, ३—प्रकृति और दिन चर्या, ४—जन्म स्थान से प्रेम; ५—ब्यावर का काम, ६—जाति सुधार और शिक्षा प्रचार, ७—मारवाड में शासन सुधार; ८—सामाजिक विचार, ९—देश हित, १०—श्री० राठी जी का सम्मान, ११—श्री राठी वियोग, १२—शोक सम्वाद और लोक मत. १३—समीक्षा और स्मारक।

"—इस जीवनी से देश भक्ति, व्यवसाय आदि अनेक बातों

की शिक्षा मिलती है। पुस्तक अवलोकनीय है।" —सौरभ
—'सभ्यता'

भारतीय अर्थ शास्त्र यह पुस्तक कई वर्षों के परिश्रम से तैयार की गई है, किसी स्वदेश सेवी को इसके विषय की शिक्षा से विमुख न रहना चहिए। सबका कर्तव्य है कि इसे भली भांति विचार कर भारत माता के आर्थिक उद्धार में सहायक हों। पुस्तक का मूल्य केवल २॥) रुपया है।

विषयसूची—पहिला खंड—विषय प्रवेश; । दूसरा खंड—धनकी उत्पत्ति, तीसरा खंड—उपभोग, चौथा खंड—मुद्रा और बैंक, पांचवां खंड—विनिमय और व्यापार, छटा खंड—धन, का वितरण, सातवां खंड--राजस्व।

भारतीय चिन्तन--इस पुस्तक में राजनैतिक, अन्तर्राष्ट्रीय, सामाजिक, धार्मिक, विविध प्रकार के विषयों का विवेचन है। मूल्य ॥।≈)

विषय सूची—इसके कुछ लेख ये है:—प्रेम का शासन; साम्राज्यों का जीवन मरण; प्यारी मा; स्वराज्य का मूल्य; मेरे ३० मिनट; राजनैतिक भूल भूलैया; तीर्थों में आत्मिक पतन; मृत्यु का भय और शोक, धर्म युद्ध; जेल की बातें; राष्ट्र की वेदी पर; समाज सुधार; मौत की तय्यारी; आदि आदि।

भारतीय राजस्वटेक्स क्यों दिये जाते जाते हैं, किस हिसाब से दिये जाते हैं, सरकारी आय किन किन कार्यो में खर्च होती है, प्रजा को उस में कितना अधिकार होना चाहिये, सरकार के अपरिमित व्यय से देश की आर्थिक उन्नति में कैसी कैसी बाधायें उपस्थित होती हैं, इन प्रश्नों पर विचार करके आर्थिक स्वाराज्य प्राप्त करना प्रत्येक देश प्रेमी का कर्तव्य है। इस के लिये 'भारतीय राजस्व' का विवेचन कीजिये। दो सौ से अधिक पृष्ट की पुस्तक का मूल्य ॥।≈) मात्र।

विषय सूची—१-विषय प्रवेश, २--कर सम्बन्धी सिद्धान्त, ३—करों का विवेचन, ४-भारतीय राजस्व व्यवस्था, ५--केन्द्रीय व्यय, ६--केन्द्रीय

आय, ७—प्रान्तीय व्यय, ८—प्रान्तीय आय, ९—सार्वजनिक ऋण, १०—स्थानीय राजस्व, ११—आर्थिक स्वराज्य।

जर्मनी के विधाता—इस पुस्तक में जर्मनी के उन प्रसिद्ध प्रसिद्ध २४ पुरुषों की जीवनियों का संग्रह है जिन्हों ने जर्मन साम्राज्य का, अपने उद्योग से पुनरुत्थान किया है। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में दिलचस्पी रखने वाले भारतीय पाठकों को यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिये। पृष्ठ संख्या ६२ मूल्य ।) मात्र।

भारतीय प्रार्थी—आकार में छोटी परन्तु भाव में बड़ी यह रचना आत्म सुधार कार्य्य में यथेष्ट फलप्रद होगी। मात्र ।≈)

यमुना लहरी—यमुना के तट पर एक बार इसे पढ़ के देखिये, आपको आनन्द और शान्ति कितने गुणा अधिक हो जाती है। इसके बदले में यमुना लहरी की न्योछावर दो आने कौन बड़ी बात है? एक दर्जन का मूल्य १।)

हिन्दी का संदेश—सुप्रसिद्ध स्वामी सत्य देव जी द्वारा लिखित इस प्रभावशाली हिन्दी के संदेश को हिन्द के कोने कोने में पहुंचाइये, मूल्य केवल एक आना प्रति, या ॥≈) दर्जन।

कृषक-दुर्शा-नाटक—यह नाटक, कृषक-प्रधान भारतीय समाज की दुर्दशा का सजीव नाटक है। आओ, सब मिल इसका विचार करें। मूल्य ॥≈) है।

नीतिदर्शन—साहित्य सेवी, देश भक्त श्री० राधामोहन गोकुल जी ने यह पुस्तक बहुत ग्रन्थों की छान बीन कर के बड़े परिश्रम से लिखी है। इस का प्रचार होने की बड़ी आवश्यकता है। बड़ी साइज के २१७ पृष्ठ की पुस्तक का मू० केवल ॥।)

इसकी राष्ट्रीय तथा भक्ति पूर्ण गज़ल तथ पद्य हृदय में नव जीवन का संचार करती हैं, सभा सोसायटियों के अधिवेशनों में इन का बड़ा मान हुआ है। प्रचारार्थ मूल्य केवल ≈)